पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज

पूज्यपाद गुरुदेव का जन्म लगते असौज तीज सन् 1942 में ग्राम खुर्रमपुर-सलेमाबाद, जनपद गाजियाबाद (पहले मेरठ) उत्तर प्रदेश में हुआ था। इनके पिताजी का नाम श्री नानक चन्द और माता जी का नाम श्रीमती सोना देवी था। लगभग दो मास की अवस्था में श्वासन में लेटने से ही कुछ समय के उपरान्त शिशु की गर्दन दोनों ओर हिलने लगी और होठ फड़फड़ाने लगे। इस क्रिया की पुनरावृत्ति होने पर अज्ञानतावश उपचार प्रारम्भ हो गया। परन्तु उस विशेष अवस्था में जाने की घटनाएँ बढ़ती रहीं और आयु बढ़ने के साथ-साथ मन्त्र-पाठ और प्रवचन स्पष्ट सुनाई देने लगा। छः वर्ष की आयु में इन्हें भयानक चेचक निकली जो इनके मुख-मण्डल पर अपनी स्मृति छोड़ गई।

सात वर्ष की अल्यायु में ही इनके पिताश्री ने अपने गाँव में ही पशुओं व कृषि के कार्य के लिए नौकर रख दिया। धीरे-धीरे इनके प्रवचनों की क्रिया को मनोरंजन व कौतुक का साधन बनाया जाने लगा। एक दिवस प्रवचन की प्रक्रिया के पश्चात् अत्याधिक पिटाई के कारण लगभग 15 वर्ष की अवस्था में भीषण परिस्थितियों में मध्य रात्रि में गृह को त्यागकर विचरण करते हुए अपनी कर्मभूमि बरनावा जा पहुँचे वहाँ पर आप योग मुद्रा में समाधिस्थ होकर प्रवचन करने लगे, जिसकी सुगन्धी आस-पास में तीव्रता से फैल गई। आपने अपने प्रवचनों के माध्यम से वेद ब्रह्म पारायण यज्ञों का आयोजन करना शुरु कर दिया। जन-समूह के अथाह प्रेम व सहयोग से बरनावा लाक्षागृह पर पाँच यज्ञशालाएँ, महानन्द संस्कृत महाविद्यालय, आश्रम व गऊशाला की स्थापना की, जिसका प्रबन्ध उनके द्वारा स्थापित श्री गाँधी धाम समिति की देखरेख में होता है।

पूज्यपाद गुरुदेव 28 दिसम्बर 1961 में पहली बार दिल्ली प्रवचन के लिए आए। अथाह ज्ञान के भण्डार, आध्यात्मिक जगत की महान् व अद्‌भुत विभूति के प्रवचन सुनने के पश्चात् प्रवचनों को टेप करने का निर्णय लिया गया और कुछ समय के उपरान्त प्रवचनों को टेप करके प्रकाशित करने के लिए पूज्यपाद गुरुदव की संरक्षकता में वैदिक अनुसन्धान समिति का दिल्ली में गठन हो गया। जन्म जन्मान्तरों के शृङ्गी ऋषि की पुण्य आत्मा ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज इस अज्ञानता के युग में वैदिक संस्कृति का पुनः से उत्थान करने के लिए जीवनपर्यन्त लगे रहे। ऋषि-मुनियों ने अनुसन्धान के द्वारा भौतिक व आध्यात्मिक विज्ञान को अपने जीवन में कितना साकार किया है उसकी अथाह चरमसीमा इनके प्रवचनों में स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। इस अथाह ज्ञान को मानवता के लिए आचरण व व्यवहार में लाने का सरल व श्रेष्ठ मार्ग प्रदर्शित किया है और साहित्य की गुत्थियाँ स्पष्ट की हैं। जिससे मानव अपना व जनसाधारण का कल्याण करते हुए इस भव सागर से पार हो सकता है।

यह दिव्य आत्मा 15 अक्टूबर 1992 को पचास वर्ष की अवस्था में ब्रह्ममूहुर्त के समय अपने लोकों को गमन कर गई। **–वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.)**

॥ ओ३म् ॥

प्रभु से विनय

प्रभु! आपसे सुन्दर कौन हो सकता है? आपसे उत्तम वैज्ञानिक कौन हो सकता है जिसने इस जगत् को रचाया, जिसने इतने बड़े ब्रह्माण्ड का सर्वत्र जीवन मानव शरीर को बना दिया। पिण्ड को ब्रह्माण्ड बना दिया। कैसी सुन्दर विवेचना है, कैसी सुन्दर रचना है आपकी। मैं तो इसको किसी काल में भी नहीं जान पाता। मैं तो यही नहीं जान पाता कि प्रभु! मेरे एक क्षण समय में कितनी तरंगें उत्पन्न होती हैं, श्रोत्रों में कितने शब्दों की उद्बाधता होती है, भगवन् मैं तो सँसार में कुछ नहीं जानता। मुझे तो भगवन्! एक ऐसा मार्ग दीजिए जिससे इस सँसार में मेरे द्वारा विडम्बना न आ पाये क्योंकि सँसार में नाना प्रकार की सुन्दरियों पर जब मेरी प्रवृत्तियाँ चलती हैं तो क्या वह सुन्दरियाँ मेरे लिए सुन्दर बन सकती हैं? किसी काल में सुन्दर बन सकती हैं। मेरे अन्तःकरण में यह सँस्कार जमते चले जायेंगे। वह जो आपने चित्त नाम का क्षेत्र बनाया है क्या उसमें भगवन्! मैं यह बीज बोता ही रहूँगा? यह मैं नहीं बोना चाहता। मैं तो यह चाहता हूँ कि यह जो बीज अँकुर मेरे द्वारा उत्पन्न होते रहते हैं प्रभु! इसका स्रोत ही नष्ट हो जाये और यह स्रोत उस काल में नष्ट होगा जब प्रभु! मैं आपको सर्वस्त्र में दृष्टिपात करूँगा और मौन हो जाऊँगा कि सँसार में कुछ है ही नहीं। प्रभु! मैं तो उस काल में उत्तम बन सकता हूँ, उससे द्वितीय मेरे लिए कोई मार्ग है ही नहीं।

पूज्यपाद-गुरुदेव

अंक : 546 कुल पृष्ठ संख्या समग्र अंक : 621
वर्ष : 46 44 समग्र वर्ष : 52

अनुक्रम

क्रम संख्या	विषय	पृष्ठ संख्या
1. प्रभु से विनय	पूज्यपाद-गुरुदेव	3
2. अनुक्रम		4
3. महर्षि साकल्य मुनि के उपदेश	पूज्यपाद-गुरुदेव	5-18
4. याग ही विज्ञान और विज्ञान ही याग	पूज्यपाद-गुरुदेव	19-32
5. शब्द विज्ञान	पूज्यपाद-गुरुदेव	33-34
6. ऋषियों के उद्‌गार		35
7. दान, पुस्तकों की सूची व पुस्तक प्राप्ति के स्थान तथा सूचना इत्यादि		36-42

नम्र-निवेदन

पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज ने अपने प्रवचनों में वेद मन्त्रों का गुणगान करते हुए उनकी प्रचलित भाषा में व्याख्या की है। उसी अमृत वाणी को जनकल्याण के लिए ''सँहिता'' के रूप में प्रकाशित करने के लिए वैदिक अनुसन्धान समिति सभी श्रद्धालु एवम् दानदाताओं से सहयोग के लिए आह्वान करती है जिससे कि प्रकाशन का कार्य सुचारू रूप से ऊर्ध्वा गति को प्राप्त होता रहे। सहयोग की राशि समिति के बैंक खाते में स्वेच्छानुसार भेजने के लिए बैंक का विवरण निम्न प्रकार से है–

वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.)
पंजाब नैशनल बैंक, खान मार्केट, नई दिल्ली
बैंक खाता नं. - 0149000100229389, IFSC Code – PUNB–0014900
website : www.shringirishi.in
Email : contact@shringirishi.in

।। ओ३म् ।।

महर्षि साकल्य मुनि के उपदेश

जीते रहो!

देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेद मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही उस मनोहर वेद वाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेद वाणी में उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है, क्योंकि वह परमपिता परमात्मा महान् विज्ञान में रत्त रहने वाले हैं। जितना भी यह जगत् मानवीयत्व में दृष्टिपात आ रहा है उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड की आभा में वह परमपिता परमात्मा निहित हो रहे हैं, उसी में रत्त जिसके ऊपर मानव परम्परागतों से ही अपने में अनुसन्धान करता रहा है और विचार-विनिमय करता रहा है, कि हम परमपिता परमात्मा के समीप जाना चाहते हैं। प्रत्येक मानव इसी विडम्बना में नाना प्रकार की आभाओं में रमण करता रहता है और कहीं न कहीं मानव अपनी आभा में नियुक्त होता रहता है कि मैं उस परमपिता परमात्मा की जो महती है उसमें मैं अपने को ले जाऊँ जैसे मेघ मण्डलों में विद्युत उसमें ओझल हो जाती है। इसी प्रकार प्रत्येक मानव उस प्रकृति के आवावेश में और प्रकृति के गर्भ में यह ओझल हो जाता है और परमपिता परमात्मा की आभा में जाना चाहता है। परन्तु जब यह संसार के नाना प्रकार के रूपों में रत्त होता है तो वह परमपिता परमात्मा के समीप न जा करके वह प्रकृति के गर्भ में ही रमण करने लगता है।

चेतना को अपनाएँ

बेटा! हमारा वेद मन्त्र यह कहता है हे मानव! यदि तू परमपिता परमात्मा को जानना चाहता है और उसके समीप जाना चाहता है, तो

तुझे नाना प्रकार के इस प्रकृति के आवेशों को त्यागना होगा और प्रकृति को वह मानव त्यागता है जो इसको जान लेता है, जो इसकी जड़वत प्रवृत्ति है उस जड़वत प्रवृत्ति को जो नहीं जान पाता है वह प्रकृति को नहीं त्याग सकता वह प्रकृति के आवावेशों को नहीं त्याग सकता। इसलिए हमारे ऋषि-मुनि परम्परागतों से ही बेटा! इसके ऊपर विचार-विनिमय करते रहे हैं और विचारते रहे हैं कि हम प्रकृति के उन आवेशों को त्यागना चाहते हैं जिन आवेशों में मानव अपने को जड़वत बना लेता है ज्ञान और चेतना के स्थान में वह जड़वत बन जाता है, जड़वत को त्यागना है और चेतना को अपने में लाना है, जो चेतना को लाने का प्रयास करता है और जड़वत को त्याग देता है वही तो मानव संसार में महान् बनता है। इसलिए हमारे आचार्यों ने, अनुसन्धान वेत्ताओं ने, राष्ट्रवेत्ताओं ने भी अपने राष्ट्र को त्याग करके भयङ्कर वनों में अपनी चेतना में सदैव रत्त रहे हैं।

साकल्य मुनि का मन को पवित्र बनाने के लिए तप

मुझे आज पुनः से कुछ वाक् स्मरण आ रहे हैं जिन वाक्यों को मैने पुरातनकाल में तुम्हें प्रकट किया है। एक समय बेटा! महर्षि साकल्य मुनि महाराज परमपिता परमात्मा के हृदयमग्न हो रहे थे। अपने में अन्वेषण करते हुए महर्षि साकल्य मुनि के समीप एक वाक्य आया कि मैं तपस्वी कैसे बनूँगा। वह भयङ्कर वनो में यह विचार रहे थे और मन को कह रहे थे कि हे मन! तू तपस्वी कैसे बनेगा। वह नाना प्रकार की प्रवृत्ति वाला वह जो मन है उसको अपने में धारण करने के लिए महर्षि साकल्य मुनि महाराज की एक निष्ठा बनी और तपस्या करने लगे। हमारे यहाँ तप के नाना प्रकार के पर्यायवाची शब्द माने गए हैं परन्तु वेद का मन्त्र कुछ और कहता है, वेद का मन्त्र कहता है ''तपान् तपश्चम् ब्रह्म वाचो'' मेरे प्यारे देखो! तप किसे कहते हैं? प्रत्येक मानव तप की विवेचना में जाना चाहता है। बेटा! तपश्च्याम् ब्रह्मा **वह तप**

कहलाता है जिस तप के द्वारा मानव की इन्द्रियों का शुद्धिकरण होता हो। सबसे प्रथम मन के शुद्धिकरण के लिए अनुष्ठान करना होता है। प्रत्येक मानव परम्परागतों से नाना प्रकार के अनुष्ठान करता रहा है। अनुष्ठानों में केवल कोई-कोई तो वायु का सेवन करने लगता है। कोई नाना प्रकार की वनस्पतियों को पान करता है, और अपान बना रहता है तो नाना प्रकार के रूपों में एक ही मन्त्र में मन को पवित्र बनाना है, क्योंकि मन को पवित्र बनाने के लिए मानव कहीं, वायु का सेवन करता है, कहीं सत्यवादी बना रहता है और मुनिवरो! कहीं, वह मन के शोधन के लिए अलग बारी बन जाता है। कहीं न्योदा में भक्त बन जाता है। कहीं पितर-भक्ति करने लगता है। कहीं आचार्य अनुष्ठान में लग जाता है, कोई नाना प्रकार के भाव में वह रत्त हो जाता है परन्तु मन्तव्य सबका एक ही है कि मेरा मन पवित्र हो जाए।

मेरे पुत्रो! देखो मन को पवित्र बनाने के लिए ऋषि-मुनियों ने एक मार्ग बड़ा-सा एकत्रित किया है, उन्होंने अपने वाक्यों में वेद के कुछ मन्त्रों को लाने का प्रयास किया, तो नाना वेद मन्त्रों में बेटा! इस प्रकार के वाक्य आए हैं, ''अन्न ब्रह्मा वाचप्रहे व्यक्तव लोकाः'' वेद का वाक्य कहता है कि अन्न जो है यह ब्रह्म को ब्रह्म के समीप ले जाता है; तो बेटा! यह कैसा वेद का शब्द है इसके ऊपर जब अन्वेषण करते हैं ऋषि मुनि, तो बेटा! विचार आता है कि ''मनाः वाचो व्रतम् ब्रह्म वाचाः'' वेद का वाक्य कहता है कि अन्न के पवित्र होने पर मन में पवित्रता आती है, इसीलिए ''अन्न ब्रह्मा'' वह मुनिवरो! देखो पत्र और पुष्पों को लेकर उनका रस बना करके वह सेवन करते रहे हैं, उनको तपा-तपा करके उनका सेवन करना और ''अन्नादम् ब्रह्मः'' मन को पवित्र बनाना और **मन को बेटा! अपने आप में रमण करना ही यह पवित्रता कहलाती है।** यह परमात्मा के समीप जाने की एक पगडण्डी है, तो पगडण्डी क्या है कि अन्न को पवित्र बनाना है मन की उत्पत्ति उसी के द्वार, से होती है। तो **साकल्य मुनि महाराज ने बारह-बारह**

वर्ष के पाँच अनुष्ठान किए, और अनुष्ठान करने से उन्होंने याग, याग में प्रतिक्रियाओं में लगे रहने से अग्नि के मुख में कुछ न कुछ आहुति देना है, वह अग्निम् ब्रह्माः मुनिवरो! देखो अपनी दो प्रकार की हमारे यहाँ अग्नियों की उपलब्धि हो जाती है। एक अग्नि वह कहलाती है जो बाह्य जगत् में प्रदीप्त हो रही है उसका शोधन करना भी अनिवार्य है। एक अग्नि हमारे अन्तःहृदय में जो प्रदीप्त हो रही है उसे भी आहुति देना है, उसको आहुति वह पत्र और पुष्पों को पान कराना है, जिससे मानव का हृदय पवित्रता की वेदी पर मानो रत्त हो जाए।

महर्षि साकल्य मुनि महाराज प्रातःकालीन वह खेचरीमुद्रा से प्राणायाम करते थे उससे उनकी अन्न की पूर्णति हो जाती, मध्यकालीन आता तो वह नाना वृक्षों के पुष्पों को ले करके उनको अग्नि में तपा करके, रस बना करके पान करते थे। सायँकाल को सूर्य प्राणायाम, सूर्य प्राणायाम में सँकल्प प्राणायाम की पुट लगा करके बेटा! उसमें शीतली प्राणायाम करके उस रस को सेवन करते थे जो वायु में परमाणुओं के रूप में बह रहा है। इस प्रकार का उन्होंने बारह वर्षों का अनुष्ठान किया, इससे उनका मन पवित्र बन गया, उनका मन महान् बन गया इससे उन्होंने मोक्ष की पगडण्डी प्राप्त कर ली, मोक्ष के निकट चले गए। क्या मानव के अन्तःकरण में क्या चित्त के मण्डल में जो बाह्य संस्कारों की उद्बुद्धता हो रही है, महानता हो रही है।

ऋषि की ममता और मोह

वह एक बार एकान्त स्थली में विद्यमान थे, कहीं से विहिन्त नामक एक दैत्य मांस आहार करने के लिए एक हिरणी के पीछे गति करने लगा वह पूर्णरूपेण गर्भवती थी, तो जैसे उसने अस्त्रों का प्रहार किया तो साकल्य मुनि के आश्रम में हिरणी और ''प्रो'' मानो वह गर्भाशय से विहीन हो गई। शावक को जन्म देकर हिरणी आगे चली गई वह जलाइदि (शावक) साकल्य मुनि के आश्रम में रह गया हिरणी तो

आगे चली गई ''दैत्यम् ब्रह्मा भी आगे गति करता रहा, तो ऐसा मुझे स्मरण है, साकल्य मुनि महाराज ने उस हिरणी के शावक को दृष्टिपात किया। अरे! इसमें तो कोई गति हो रही है और साँस की, प्राण की गतियाँ हो रही हैं, तो साकल्य मुनि ने अपने कमण्डलों में से जल, उसके मुखारबिन्दु में परणित किया उसके साँसों की गति कुछ मध्यम बनी अपनी स्थलियों पर आ गई। शावक ने जल का और उपभोग किया तो वह जीवित हो गया। साकल्य मुनि ने उसे कण्ठ से आलिङ्गन कर लिया, तो बेटा! देखो वह उसकी पालना में लग गए। जब उसकी पालना में लग गए, मेरे प्यारे नाना प्रकार का भोज्य जो उसे प्राप्त कराते रहते। समय पर जल प्रदान करते, समय पर उसे दुग्धाः प्रदान कराते।

वह वेचुक नामक राज्य के समीप पहुँचे और वेतकेतु राजा के द्वार पर जा करके उन्होंने कहा ''सम्भवः लोकाम्''। साकल्य मुनि को जब राजा ने दृष्टिपात किया तो वाचकुकेतु राजा ने उनसे कहा, यहाँ साकल्य मुनि का आगमन कैसा मैं दृष्टिपात कर रहा हूँ यह तो बड़ा मेरा अहोभाग्य है। उन्होंने राजस्थली को त्याग दिया और यह कहा आइए भगवन् पधारिए। वह राजस्थली पर विद्यमान हो गए और विद्यमान हो करके राजा ने चरणों को स्पर्श करके कहा, कहिए भगवन् कैसे आगमन हुआ। उन्होंने कहा राजन् मुझे गौ की इच्छा है मुझे दुग्ध देने वाली गौ प्रदान कीजिए। उन्होंने कहा प्रभु यह तो आप मुझे सूचना दे देते मैं गौ आपके आश्रम में पहुँचा देता। यह प्रभु आपने कष्ट क्यो किया है। उन्होंने कहा कि भ्रमण करता हुआ मैं ही आ गया कोई बात नहीं है। तो राजा ने ऋषि का तो स्वागत किया और अपने सेवकों से कहा जाओ देखो ऋषि आश्रम में एक गौ को ले जाओ दुग्ध देने वाली गौ होनी चाहिए। मेरे प्यारे गौ आश्रम में पहुँच गईं और ऋषि ने वहाँ से गमन किया, राजा ने कहा प्रभु और कुछ देख लीजिए। साकल्य मुनि ने कहा राजन्! तुम्हारे राष्ट्र में महानता तो होनी ही चाहिए क्योंकि देखो तुम्हारा राष्ट्र चरित्र में ओत-प्रोत होना चाहिए, तुम्हारे राष्ट्र में

विद्या का माध्यम पवित्र होना चाहिए, तुम्हारा राष्ट्र विज्ञानवेत्ता होना चाहिए। मेरे प्यारे देखो राजा को यह उपदेश दे करके और वहाँ से आज्ञा पा करके उन्होंने गमन किया और वह भ्रमण करते हुए वह अपने आश्रम में पहुँचे। तो उन्हें एक गौ प्राप्त हो गईं उसके दुग्ध को उस हिरणी के बालक को दुग्ध का आहार कराते, दुग्ध का पान कराते रहते थे, ऋषि ममता और मोह ऐसी विचित्र होती है, बेटा! क्या मानो जिन्होंने अपने शरीर का मोह नहीं किया परन्तु देखो हिरणी के बाल्य से कितना मोह हुआ उसको कण्ठ से आलिङ्गन, उसका चुम्बन करते रहते, उसको पुत्र की भाँति उसका पालन करते रहते। मेरे प्यारे देखो वह हिरणी के बालक को भिन्न-भिन्न प्रकार की शिक्षा देते रहते।

साकल्य मुनि की शिक्षा और जीवन

साकल्य मुनि महाराज मेरे पुत्रो! देखो श्वेतकेतु मुनि महाराज के पुत्र कहलाते थे और श्वेतकेतु मुनि महाराज का आयु बड़ा दीर्घ था। देखो उनकी जो माता थी, ''सौमवृति वाचन्न महे'' उनकी जो माता थी वह शकुवरुणा वाचम्.... ब्रह्मा श्वेधा उनका नामोकरण था। श्वेधा अपनी लोरियों का पान करा करके और उसे यही शिक्षा देती है कि हे बाल्य! तू निसंकोच हो, और निर्वस्त्रीय बन जाए परन्तु तू किसी से इच्छा प्रकट मत कर। माता की तो यह शिक्षा रही, श्वेतकेतु यही कहते रहते कि हे ब्रह्मचारी! तू राजा के राष्ट्र में अपने विचार के पन को इच्छा प्रकट करो अपने स्वार्थ के लिए मानो स्वार्थपरता में नहीं आना चाहिए पिता की भी यही शिक्षा आचार्यों की भी यही शिक्षा रही, परन्तु देखो अपने जीवनकाल में साकल्य मुनि महाराज ने पाँच अनुष्ठान किए बारह-बारह वर्षों के, परन्तु दो अनुष्ठान उन्होंने याज्ञिक होने के लिए किए। मेरे पुत्रो! देखो उनकी लगभग **चार सौ वर्ष की आयु में उन्होंने किसी से कोई इच्छा प्रकट अपने लिए नहीं की।** कितना त्याग और तपस्या में उनका जीवन रहा है।

महर्षि का कात्याङ्ग के गृह में उपदेश

एक समय महर्षि साकल्य मुनि महाराज मुनिवरो! देखो कात्याङ्ग के गृह में जा पहुँचे। भ्रमण करते हुए कात्याङ्ग गृह में पहुँचे तो कात्याङ्ग के यहाँ एक उनकी कन्या थी, उस कन्या ने कहा प्रभु मुझे कुछ उपदेश दीजिए। उन्होंने कहा कि तुम्हें क्या उपदेश दूँ! कन्या ने कहा, नहीं! भगवन्! आप तो बड़े महान् तपस्वी हैं, वेदज्ञ हैं दर्शनों के गर्भ को जानते हैं। उन्होंने कहा कि देखो! मैंने तो यह पाया है अब तक मुझे जो शिक्षा प्राप्त हुई वह यह हुई है कि किसी से हीनता के वाक्यों को मत उच्चारण करो। तुम कन्या हो, कात्याङ्ग के गृह में तुम्हारा जन्म हुआ है जब तुम मानो **अपने कुल का तुम्हारा परिवर्तन हो** तो तुम अपने हृदय में यह इच्छा प्रकट मत करो कि मेरी जो माता है या पितर है मेरे पालन-पोषण के लिए कुछ प्रदान करें क्योंकि यह इच्छा करना तुम्हारे लिए मानो तुम्हारी हीनता है। यह मेरे पूज्यपाद पिताजी ने माता का उपदेश और आचार्यों का मुझे यह उपदेश रहा है। यदि कन्या की यह इच्छा रहती है कोई परिवर्तन होने पर पति को, पति को न प्रवेश होने पर क्या मैं मानो मेरे लिए कोई इच्छा माता प्रहे वाचो हो जाए तो यह मेरी हीनता मेरा आत्मा उससे मृत्यु को प्राप्त हो जाएगा। ऐसा ऋषि साकल्य ने देखो कात्याङ्ग की कन्या को यह उपदेश दिया। कात्याङ्ग की कन्या ने और स्वाँति ने यह कहा कि हे भगवन्! बहुत प्रियतम है मानो आपका उपदेश मुझे शिरोमणी है क्योंकि वाक्यों में यह इच्छा प्रकट ही नहीं करनी चाहिए क्योंकि **मानव को अपने क्रियाकलापों में, तपस्या में, मानवीयत्व में मानो शरीर रत्त रहना चाहिए।** जब ऋषि ने यह वाक् प्रकट किया तो कात्याङ्ग की कन्या ने कहा कि धन्य है प्रभु! उन्होंने कहा प्रभु मुझे कोई और उपदेश दीजिए। उन्होंने कहा कि हे देवी! मेरा उपदेश तो केवल यही है कि **मानव को वेद का अध्ययन करना चाहिए, वेद प्रकाश में रत्त रहना चाहिए,** ''वेदाः अमृताम् ब्रह्म लोकाम्'', यह जो वेद है यह अमृत है यह परमपिता परमात्मा के मानो

हमारे यहाँ एक वेद है परमपिता परमात्मा जो सृष्टि का, सृष्टि को उत्पन्न करने वाला है निर्माणवेत्ता है। मानो सृष्टि के प्रारम्भ में मानव के ज्ञान और विज्ञान को और मानो अपने संस्कारों को उपलब्ध करने के लिए ज्ञान और विज्ञान की धाराओं में रत्त होने के लिए मानो उन्होंने वेद का पवित्र हमें ज्ञान दिया है। इस वैदिक ज्ञान को, वैदिक प्रकाश को अपना करके हम अपने मानवीयत्व को देखो ऊर्ध्वा में ले जाएँ और मोक्ष की पगडण्डी को ग्रहण करें।

मेरे प्यारे देखो कात्याङ्ग की पत्नी ने कहा प्रभु आप उपदेश दे रहे हैं, मेरी कन्या को यह तो बड़ा प्रिय है परन्तु देखो मोह के सम्बन्ध में आपका क्या विचार है कि मोह होना चाहिए या नहीं होना चाहिए? कात्याङ्ग की पत्नी से **ऋषि ने कहा कि मोह नहीं होना चाहिए परन्तु कर्त्तव्य का पालन होना चाहिए,** क्योंकि कर्त्तव्य में मानव की प्रवृत्तियाँ निहित रहती हैं। एक माता के गर्भस्थल में बालक पनप रहा है परन्तु माता यह जानती है कि निर्माण करने वाला प्रभु है यह परमपिता परमात्मा की सम्पदा है यह मेरी सम्पदा नहीं है। ''इदन्नमम्ः'' यह मेरी सम्पदा नहीं है यह सम्पदा प्रभु की है। मेरे गर्भ से उत्पन्न होने वाला बालक मानो प्रभु की आज्ञा का, देखो उसके नियमों का पालन करने वाला हो तो मेरा यह जीवन सार्थक बन जाएगा। मानो जब माता के हृदय में ये विचार रहते हैं तो माता मानो अपने बालक को जन्म दे करके मानो अपने में प्रसन्न है कि मेरा बाल्य पूर्णायु होगा। क्योंकि माता यह जानती है जो मेरे विचारों में एक निष्ठा रहेगी तो मेरे गर्भ से उत्पन्न होने वाला बालक भी पूर्णायु को प्राप्त होगा और जब पूर्ण आयु में होगा तो माता-पिता को देखो उसका शोक भी नहीं होगा। शोक उस काल में प्राणी को होता है जब प्राणी का मिलन हो करके विच्छेद हो जाता है। हमारे यहाँ उस काल में मुनिवरो! देखो माता-पिता से पूर्व बालक का (पुत्र का) विच्छेद नहीं होता है क्योंकि माता अपने कर्त्तव्य का पालन करती है और मृत्यु के रूप को जान लेती है। अपने

बाल्य को माता कहती है, हे बालक! यह जो संसार है, जिस संसार में हम और तुम विद्यमान हैं यह संसार निस्सार है इसमें कोई सार नहीं है यह तो केवल विडम्बना का एक क्षेत्र बना हुआ है, तो मुनिवरो! देखो माता कहती है, हे बालक! इस संसार से उपराम होना। **इस संसार को अपने उपाँगों से जानना ही हमारा कर्त्तव्य है।** हे बालक! तुम मुझे जानो मैं तुझे जानूँ संसार में देखो मृत्यु का अभाव हो जाता है। माता जब यह अपने बाल्य को यह शिक्षा बाल्यकाल में संस्कारों को उपलब्ध करा देती है, तो मुनिवरो! देखो ''मातम् ब्रह्मा'' वह कहती है बालक तेरा अज्ञान होना ही मृत्यु है, शोकाकुल होना ही मृत्यु है, हे बालक! संसार में निराशा ही तेरी मृत्यु है। मेरे प्यारे जब माता बालक को यह देखो गौरव के वाक्य प्रकट करती है तो माता कर्त्तव्य का पालन कर रही है और जो कर्त्तव्य का जो उपदेश है माता का वह महान् और पवित्र बन जाता है। आभा में नियुक्त हो जाता है।

मुनिवरो! देखो कात्याङ्ग के गृह में जब साकल्य मुनि महाराज ने यह उपदेश दिया तो मुनिवरो! देखो कात्याङ्ग की पत्नी चरणों को स्पर्श करके बोली धन्य है प्रभु! परन्तु मेरा एक प्रसङ्ग और है भगवन् क्या जब बाल्य महान् बन जाए और वह गृहस्वामीवादी बन जाए तो माता-पिता को क्या करना चाहिए? मेरे प्यारे देखो उस समय ऋषि ने कहा कि माता-पिता को मानो प्रभु की गोद में चला जाना चाहिए, वे ब्रह्मयाग में रत्त हो जाएँ और ब्रह्मयागी बन जाएँ, ब्रह्मयागी वह प्राणी होते हैं जो ब्रह्म का चिन्तन करते रहते हैं, और ब्रह्मज्ञान को प्रकृति के गर्भ में जो ब्रह्म की आभा निहित हो रही है, उस आभा में माता-पिता जब रत्त हो जाते हैं, वह जो उसके गृह में बाल्य-बालिका हैं माता-पिताओं के उस ब्रह्मज्ञान के, ब्रह्मज्ञान का देवत्व जानने का वह बाल्य इसका अनुकरण करते हैं तो गृह में मानो स्वर्ग की स्थापना हो जाती है, स्वर्ग आ जाता है वायुमण्डल दूषित नहीं होता। वायुमण्डल जब दूषित होता है जब गृहस्वामी और गृहस्वामिनी गृह में निहित रहते

हैं देखो पुत्र गृहस्वामी हो जाता है, गृहस्वामिनी का वह प्रोः हो जाता है उस समय देखो वह माता-पिता उसकी आभा में उसके क्रियाकलाप में जब बाधक बनते हैं तो उस समय गृहम् ब्रह्मा वह सतवादी विचार न रह करके कलह में गृह हो जाते हैं और वह गृह नार्किक बन करके, वही नार्किक विचार वायुमण्डल में प्रवेश होते हैं तो वायुमण्डल भी दूषित हो जाता है।

मेरे प्यारे! देखो बाह्य और आन्तरिक दोनों दूषित हो गए तो उस समय मुनिवरो! देखो उसके शोधन के लिए कोई क्रियाकलाप नहीं रहता और वह परमाणु उसी को प्राप्त हो करके और भी कलह का क्षेत्र बन करके वह नाना प्रकार के और प्रिय भक्षवपदार्थों में रत्त हो करके मेरे प्यारे देखो अपने को नष्ट करने वाले बन जाते हैं।

कात्याङ्ग पत्नी द्वारा महर्षि के भविष्य की चर्चा

विचार-विनिमय क्या मैं विशेष चर्चा नहीं देने आया हूँ, विचार यह देने के लिए आया हूँ महर्षि साकल्य मुनि महाराज कात्याङ्ग के गृह में बेटा! देखो वह यह वाक् उच्चारण करने लगे। मुनिवरो! देखो कात्याङ्ग की पत्नी ने कहा प्रभु मुझे कुछ ऐसा प्रतीत होता है, आपके शरीर से आपके हृदय से मुझे ऐसी सुगन्ध आ रही है जैसे अब्रहो ममता में परणित हो जाएँगे। वह साकल्य मुनि ने कहा देवी तुम्हारा वाक्य मिथ्या तो होता नहीं, मैंने कई काल कई ऋषियों से यह वाक् मैंने श्रवण किया है क्या तुम्हारा वाक् यथार्थ है तुम जीवन में सत्य उच्चारण करने वाली हो मिथ्या नहीं उच्चारण करती हो। जब इस प्रकार की आभा जब तुम्हारे में है तो मैं भी मोह में परणित हो सकता हूँ कोई ऐसा आश्चर्य नहीं है। मेरे प्यारे देखो उन्होंने कहा तो प्रभु आप अपने को ममता से दूर कीजिए, आप अपने को मोह से भी दूर कीजिए। उन्होंने कहा देवी मैं प्रयास तो करूँगा। परन्तु देखो यह कैसे होगा और उसको प्रभु ही जानता है मैं नहीं जान पाता आपने भविष्य की मुझे चर्चाएँ घोषणा

की हैं। मेरे प्यारे हो सकता है मेरे यह शरीर में, चित्त के मण्डल में ऐसे अँकुर विद्यमान हों।

महर्षि साकल्य मुनि महाराज का चिन्तन

साकल्य मुनि महाराज ने बेटा! एक रात्रि वहाँ विश्राम किया और वहाँ से उन्होंने गमन किया, गमन करते हुए जब वह आश्रम में आए तो हिरणी का बालक व्याकुल हो रहा था, वह जल का भी पान नहीं कर रहा था, उनसे उसको मोह हो गया देखो हिरणी के बालक को अपने ऋषि को पिता तुल्य स्वीकार करके उससे मोह हो गया अब ऋषि ने आ करके उसे अपने कण्ठ से उसे आलिङ्गन किया, रात्रि का समय हुआ तो उस वाक् को विचारने लगा क्या मुझे कात्याङ्ग की पत्नी ने जो वाक् कहा है वह वाक् तो उन्होंने बड़ा विचित्र कहा है, हो सकता है मुझे तो आज हिरणी के बाल्य को दृष्टिपात करके मेरा अन्तःहृदय यह कहता है कि तुझे मोह हो गया है मानो मुझे ममता हो गई है तेरे बिना यह नहीं रह पाता और मेरा अन्तःहृदय ही मानो उसकी निन्दनीय दशा को दृष्टिपात करके मैं भी व्याकुल हो गया हूँ। इस प्रकार वे चिन्तन में लग गए और चिन्तन करते रहे। मेरे प्यारे देखो चिन्तन में लगे रहे मुनिवरो! देखो प्रातःकालीन हिरणी के बाल्य को पुनः से हृदय से आलिङ्गन किया और उसको गौ के घृत और दुग्ध के द्वारा उसका पालन करने लगे।

आश्रम में मुनि के माता पिता का आगमन

मुझे कुछ ऐसा स्मरण है क्या मुनिवरो! देखो पूर्णरूपेण जब वह पालन करने लगें तो एक समय भ्रमण करते हुए कहीं से उनके पिता श्वेतकेतु आ गए और माता भी आ गईं। ''पित्रो सम्भवा लोकाम्'' मेरे प्यारे श्वेतकेतु को दृष्टिपात करके महर्षि साकल्य मुनि महाराज ने मानो उनके चरणों को स्पर्श किया और उन्हें आसन दिया, उस पर वह विराजमान हो गए, माता भी विद्यमान हो गई। तो वह हिरणी के बाल्य

को दुग्ध का पान कराने लगे। उनका स्वागत तो इतना ही किया, तो वह विराजमान हो गए और वह हिरणी के बाल्य को दुग्ध आहार कराने लगे। माता पितरों को मानो दुग्ध आहार नहीं कराया, अन्न जल पान नहीं कराया मानो कन्दमूल नहीं दिया। हिरणी के बाल्य की ममता में उसके रत्त रहने पर मेरे प्यारे देखो वह श्वेतकेतु ऋषि के अश्रुपात होने लगे और अपनी पत्नी से बोले क्या, हे देवी हम वृद्ध, यहाँ से हमारा प्रस्थान होना चाहिए, उन्होंने कहा प्रभु ''आपं ब्रह्मः पुत्रो सयमं ब्रह्मा'' उन्होंने कहा ऋषि साकल्य के मानो पुत्र स्वीकार न करोगे इन्हें ऋषि की दृष्टि से दृष्टिपात करोगे, उन्होंने कहा देवी मैं तो दृष्टि ऋषि की आभा से ही प्राप्त कर रहा हूँ परन्तु देखो मेरा अन्तःआत्मा दुःखित हो रहा है उन्होंने कहा क्यों? उन्होंने कहा देवी! हमने तुमने इसे बाल्यकाल में इसके बनाने में जो हमने सहयोग दिया है वह सहयोग आज हमें व्यर्थ प्रतीत हो रहा है। मेरे पुत्रो! उन्होंने कहा भगवन् ऐसा क्यों? उन्होंने कहा इससे मोह हो गया है मोह होने के कारण हम आए हैं, हमरा सम्भवो, हमारा अन्तःहृदय यह कह रहा है क्या यह ममता-मोह में परणित हो गया है। ''साकल्यम् ब्रह्मा'' साकल्य ने कहा हे भगवन्! ऋषिवर आपके अश्रुपात क्यों हो रहे हैं, क्यों व्याकुल हो रहे हो? उन्होंने कहा कि हे ''पुत्रो भवाब्रहे'' क्या मैं तुम्हें मोह में दृष्टिपात कर रहा हूँ। साकल्य मुनि ने कहा प्रभु आप मुझे तो मोह में ही दृष्टिपात कर रहे हैं, मैं मोह में आपको भी दृष्टिपात कर रहा हूँ। अब मुनिवरो! देखो वह पिता मौन हो गए। माता ने कहा कहो भगवन्, ऋषिवर, साकल्य मुनि क्या कह रहे हैं? मेरे प्यारे उन्होंने कहा यथार्थ कह रहे हैं। मैं ममता में ही तो साकल्य मुनि कहते हैं, क्या मोह की सन्तान तो मोह में ही नष्ट हो जाती है भगवन्! तो मेरे प्यारे देखो स्वाद को दृष्टिपात करते हुए उन्होंने कहा यथार्थ है। तो इसीलिए वेद का ऋषि कहता है, मन्त्र कहता ''वक्तव्य वृहे व्राणम् वृहे वाचन्नम!'' **माता-पिता को कर्त्तव्य का पालन करना चाहिए, मोह से न पालन करना चाहिए और**

न मोह में उनकी सम्पदा को एकत्रित करना चाहिए। वेद का ऋषि कहता है यह मोह-ममता में संसार नष्ट हो जाता है। देखो ऋषि ने यही कहा अपने पिता से क्या साकल्य ने कहा, हे पितर तुम मोह में आते हो और शोकतुर हो, तुम्हें मेरा मोह है कि मैंने इनका सहयोग दिया है। माता नहीं कह रही है माता मोक्ष की पगडण्डी के लिए अपने में रत्त हो रही है और आप शोकातुर हो करके नार्किक अपने जीवन को बना रहे हैं। संस्कारों की उपलब्धियों को जन्म दे रहे हैं, मेरे पुत्रो! देखो साकल्य मुनि ने जब यह कहा, उन्होंने कहा मुझे मोह है और होना है क्योंकि मोह से मेरा जन्म हुआ है और मोह में ही मेरा शरीर पूर्ण हो जाएगा। साकल्य मुनि ने यह कहा तो मुनिवरो! देखो वह श्वेतकेतु, उनकी माता मानो श्वेतकेतु की पत्नी साकल्य की माता ने कहा, '''पुत्रो भवा सम्भवाम् वाचन्नमम् ब्रह्मः शोकम् ब्रह्मा वाचो देवाः'' यह कह करके कि तुम्हारा जीवन महान् बने, यह आशीर्वाद दे करके बेटा! माता और पिताओं ने वहाँ से गमन किया।

माता की उदारता

मेरे प्यारे देखो वह अपने में चिन्तन करने लगे, रात्रि जब काल आया तो साकल्य मुनि विचारने लगे कि मेरी प्यारी माता कितनी मेरी प्रिय है, माता अब भी कितनी उदार है कितनी महान् है मानो यह जानती हुई भी मुझे कहती है ''पुत्रो भविताम् ब्रह्मा अद्वित्य'' तुम अपने में आयुष्मान बन करके जीवन को व्यतीत करो। साकल्य मुनि इसी चिन्तन में लगे रहे ब्रह्म ज्ञान में, ब्रह्म की आभा में भी और मुनिवरो! देखो ''साकल्य सम्भवा ब्रह्म हिरणाक्षम् वृहे'' वह हिरणी के बाल्य से मोह-ममता में मानो परणित रहे।

कर्त्तव्य करने की प्रेरणा

बेटा! देखो मोह की आभा में मानव को विशेष नहीं जाना चाहिए। वेद के वाक्य और वेद के ऋषि-मुनियों ने यह कहा क्या मानव

को ममता ''ब्रह्म वार्चो देवाः'' मानव को अपने कर्त्तव्यवाद का पालन करना चाहिए माता पालना करती है अपने में कर्त्तव्यवाद में रत्त हो जाए। बेटा! कर्त्तव्यवाद ही मानव को ऊँचा बनाता है, कर्त्तव्यवाद ही राष्ट्र को ऊँचा बनाता है, कर्त्तव्यवाद ही मेरे प्यारे! देखो विशेषकर संसार में सूर्य प्रातःकाल में उदय हो रहा है वह किसी से स्वार्थ नहीं चाहता प्रकाश देता रहता है, नाना प्रकार की किरणें देता रहता है वह प्रत्येक प्राणी को प्रकाश देता है, उनका भोज्य प्रदान करता रहता है। चन्द्रमा मानो रात्रि के काल में अमृत को बहाता रहता है। कोई भी प्राणी उसी से वह सौम, सौमकेतु को प्रदान करता रहता है वह कर्त्तव्यवाद है।

रात्रिकाल में बेटा! प्राणेश्वर अपने में ध्वनित होता रहता है। विश्रामाम ब्रह्मः प्रत्येक प्राणी उसमें विश्रामित हो जाता है, विश्राम करने लगता है, तो **मेरे प्यारे देखो प्रत्येक मानव को प्रभु का ध्यान करना चाहिए।** आज का वाक्य समाप्त, अब वेदों का पठन-पाठन होगा।

महर्षि महानन्द जी–अच्छा भगवन्!
पूज्यपाद गुरुदेव–आनन्द रहो!

दिनाँक : 21 नवम्बर, 1985
स्थान : सैहडभर

।। ओ३म् ।।

याग ही विज्ञान और विज्ञान ही याग

जीते रहो!

देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेद मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही उस मनोहर वेद वाणी का प्रसारण होता रहता है जिस पवित्र वेद वाणी में उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि वह परमपिता परमात्मा यज्ञोमयी स्वरूप माने गए हैं। याग उसका आयतन माना गया है अथवा उसका वह गृह है। हम उस परमपिता परमात्मा को अपने में धारण करना चाहते हैं। प्रत्येक प्राणी-मात्र अपने में यह चाहता है कि मैं परमपिता परमात्मा को अपना यज्ञोमयी स्वरूप बना सकूँ और उस आभा में लगा रहता है। मनोहर गम्भीर चिन्तन में लगा रहता है और ऐसा मनोनीत वह गम्भीर चिन्तन अपने जीवन को चिन्तनीय विषय बना लेता है। अपने को गम्भीर मुद्रा में मुद्रित करता हुआ एक आभा में निहित हो जाता है जिसके ऊपर मानव परम्परागतों से ही एक अनुसन्धान और अन्वेषण करता रहता है। विचारता रहता है कि मैं परमपिता परमात्मा को प्राप्त हो जाऊँ और उसकी जो आनन्दमयी मोक्ष की पगडण्डी है उसका वह पथिक बनना चाहता है।

हृदय-अगम्य ज्योति को धारण करें

मेरे प्यारे! हम परमपिता परमात्मा को क्या स्वीकार करते हैं? वेद का मन्त्र कहता है कि वह परमपिता परमात्मा यज्ञोमयी स्वरूप हैं जितना भी संसार में यह याग हो रहा है चाहे वह आध्यात्मिक याग

हो, चाहे वह भौतिक याग हो, दोनों यागों में वह निहित रहता है। इसीलिए वेद कहता है कि वह यज्ञोमयी स्वरूप है क्योंकि प्रत्येक मानव अपने में याज्ञिक बना हुआ है, चाहे वह परोक्ष रूप में हो, चाहे वह प्रत्यक्ष रूप में क्यों न हो। जब हम उसके ऊपर टिप्पणियाँ प्रारम्भ कर देते हैं और विचारते हैं कि यह संसार में तो यज्ञो का एक नृत्य हो रहा है जिसके ऊपर मानव परम्परागतों से ही अन्वेषण और अनुसन्धान करता रहा है और अपनी विचित्र धाराओं में लगा हुआ है। तो आज का हमारा वेद मन्त्र कुछ कह रहा है कि वेद में क्या हैं? इसके ऊपर बहुत-सी टिप्पणियाँ हुयी हैं और विचार-विनिमय होता रहा है। वह परमपिता परमात्मा यज्ञोमयी स्वरूप होने से वह संसार उसी के गर्भ में नृत्य करता रहता है। परन्तु वेद का मन्त्र कहता है कि हम उस मनोनीत हृदय-अगम्य जो ज्योति है उसको अपने अन्तःकरण में हम धारण करते रहें जिससे हमारा अन्तःकरणीय जीवन महान् और पवित्र बन करके यज्ञोमयी स्वरूप को प्राप्त हो जाए। हमारे वैदिक साहित्य में भिन्न-भिन्न प्रकार की धाराओं का वर्णन होता रहा है परन्तु उस वरणीय आभा में जब हम रत्त होते हैं और जीवन को अपने में धारण करने लगते हैं तो उसकी आभा पवित्र बन करके मानवीय जीवन की एक पवित्र अमूल्य देन एक धारा के रूप में हमें दृष्टिपात आती है।

यज्ञ का महत्त्व

आज का हमारा वेद मन्त्र कुछ कह रहा है। बेटा! आज हम उसी स्थलियों में ले जाना चाहते हैं जहाँ महाराजा अश्वपति के यहाँ भिन्न-भिन्न प्रकार के यागों का चयन होता रहा है। उनके यहाँ वाजपेयी याग, अग्निष्टोम यागों का वर्णन प्रायः क्रियात्मक रूपों में रत्त होता रहा है। महाराजा अश्वपति अपने में बहुत गम्भीर मुद्रा में मुद्रित हो जाते रहे हैं और वह जब अपने में मुद्रित होते तो वेद मन्त्रों का गायन और उसकी ध्वनियाँ तथ्यों में रत्त रहने वाली थीं। एक समय महाराजा

अश्वपति ने नाना वैज्ञानिकों को निमन्त्रित किया और उनमें दोनों प्रकार के विज्ञानवेत्ता थे, आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता और भौतिक विज्ञानवेत्ता। उन्होंने एक भव्य सभा की और सभा में वह उद्‌गीत गाने लगे कि हे वैज्ञानिको! तुम्हारी दृष्टि में, तुम्हारे विज्ञान में यज्ञ का क्या महत्व माना गया है? वैज्ञानिकों ने कहा प्रभु! हमारा तो विज्ञान यह कहता है कि यह जो याग है यह अपने में अनूठा बन करके रहता है और इसकी अनुष्ठ वृत्तियाँ महान् और पवित्र बन करके रहती हैं, तो वैज्ञानिकों ने कहा, जिस समय हम नाना अनुवाद में परणित होते हैं और वेद मन्त्रों को विचार-विनिमय करने लगते हैं, वेदों का ज्ञान और विज्ञान हमारे समीप आता है, एक-एक अणु की प्रतिभा, परमाणु का उसमें चयन, प्राणों की उसमें चिन्तनता यह जब हमें दृष्टिपात होती है तो उस समय याग भी अनूठा बन करके रहता है। एक मानव नाना प्रकार के विज्ञान में लगा हुआ है और वह उस विज्ञान में नाना लोक-लोकान्तरों में रमण करना चाहता है। अपनी उड़ानें उड़ रहा है। एक याज्ञिक अपने में उड़ान उड़ रहा है, जब स्वच्छ हृदय से अपनी यज्ञशाला में विद्यमान हो करके वह वेद मन्त्रों का उद्‌घोष करने लगता है तो जिस स्थली पर याग हो रहा है वही पवित्रता जहाँ तक उसकी ध्वनियाँ जा रही हैं। देव-लोक में भी ध्वनियाँ देवत्व को प्राप्त हो रही हैं। उस समय वैज्ञानिकों ने यह कहा कि याग अपने में अनूठा बन करके परमाणुवाद का शोधन कर रहा है। द्यौ में उसकी प्रतिभा का चयन हो रहा है जब इस प्रकार यागों का चयन होता है तो उसमें एक भव्यता उन्हें प्राप्त होने लगती है। वह मानवीय भव्यता विचित्रता में रत्त रहने वाली है। तो आदि ऋषियों ने, वैज्ञानिकों ने कहा है कि विज्ञान में याग का बड़ा महत्व माना गया है। क्योंकि जिस भी काल में वायुमण्डल को शोधन की आवश्यकता रही, उसी काल में नाना प्रकार के यागों का चयन भी मानव के समीप आता रहा और वह जो नाना प्रकार का याग है वह वायुमण्डल में तरङ्गों के रूप में भरण कर जाता है। वह तरङ्ग में तरङ्गित होता हुआ विज्ञान के आङ्गन में प्रवेश कर जाता है।

उन्होंने कहा, राजन्! यह जो विज्ञान है यह तो याग की तरङ्गों पर निहित रहता है। यदि इस याग की तरङ्गों को जब हम भिन्न कर देते हैं तो विज्ञान अपने में विज्ञान नहीं रह पाता। ऋषि ने जब यह निर्णय दिया तो मुनिवरो! उस समय महाराजा अश्वपति ने पुनः यह प्रश्न किया, हे वैज्ञानिको मैं अब तक जान नहीं पाया हूँ कि तुम्हारे विज्ञान में याग का क्या महत्व माना गया है। उन्होंने कहा, प्रभु! याग का महत्व विज्ञान के आङ्गन में ही जानना चाहते हो तो प्रभु! मेरे विचार में तो यह है कि प्रत्येक अणु और परमाणु अपनी-अपनी धाराओं पर गति कर रहा है और वह याग को लिए हुए गति कर रहा है। ''यागाम् भविते लोकाम्'' जैसे सूर्य प्रातःकाल में उदय होता हुआ संसार को ऊर्जा देता है अथवा प्रकाश देता है। वही प्रकाश मानवीयता में प्रवेश कर जाता है। वही प्रकाश विज्ञान के आङ्गन में प्रवेश कर जाता है। वृत्तियों में रमण हो जाता है। वैज्ञानिक कहते हैं कि याग अपने में विज्ञान में अनूठा बन करके रहा है। सुगन्ध को चाहता है तो सुगन्ध देने वाला याग है। विचारों को देने वाला है और **यह वायुमण्डल जब भी पवित्र बनता है यह वाणी के द्वारा पवित्र बनता है।** यह नाना परमाणुओं से तो पवित्र और ऊँचा बनता ही है परन्तु वाणी अपने में रहस्यता की आभा में निहित हो जाती है। तो उस समय वैज्ञानिकों ने कहा कि हमारे विचार में तो यह है राजन्! कि **यह याग ही विज्ञान है और विज्ञान ही याग है।**

याग में विज्ञान का स्वरूप

उस समय पुनः राजा अश्वपति ने कहा, हे वैज्ञानिकों, मेरा हृदय अब तक सन्तुष्ट नहीं हुआ है। मैं यह जानना चाहता हूँ कि यह जो विज्ञान है तुम्हारा परमाणुवाद में रत्त हो रहा है। परन्तु विज्ञान अपने में विज्ञान बन करके रहता है और अनूठा बन करके रहता है। जब तक विज्ञान और याग दोनों का सँगतिकरण नहीं हो जाता तब तक

विज्ञान और याग दोनों को हम सार्थकता में दृष्टिपात नहीं कर रहे हैं। विचार आता है कि दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं। एक-दूसरे में समन्वय हो रहे हैं। एक-दूसरे की धारा में रत्त हो रहे हैं।

वैज्ञानिकों ने यह सिद्ध किया कि हे भगवन्! हे अश्वपति! आपको प्रतीत है कि एक समय हम भ्रमण करते हुए समुद्र के तट पर पहुँचे और समुद्र के तट पर जब पहुँचे तो वहाँ महाराजा हनुमान और गणेश जी दोनों अपने में कुछ विचार-विनिमय कर रहे थे। हम भी उन्हीं के समीप जा पहुँचे। उन्होंने कुछ साकल्य एकत्रित किया था और वह कामधेनु गऊ के द्वारा याग कर रहे थे। जब याग में चयन करते-करते दोनों एक-दूसरे में रत्त हो गए, एक-दूसरे की धारा को अपने में धारित करते हुए अपने को महान् बनाने के लिए तत्पर हुए, उस समय उन्होंने कहा यह जो हमारा परमाणुवाद है इसमें हमारा विज्ञान कहाँ तक सार्थक है। तो महाराजा हनुमान और गणेश जी दोनों का विचार-विनिमय हो रहा था। जब गणेश जी ने प्रश्न किया तो महाराजा हनुमान जी बोले कि हे भगवन्! यह जो विज्ञान है और यह जो याग है यह विज्ञान याग में है। और याग विज्ञान में है। उन्होंने कहा, प्रभु! यह कैसे? यज्ञ की प्रतिक्रिया में जब हम रत्त होते हैं तो एक समय यजमान के द्वारा पहुँचे। मगध राष्ट्र में एक याग हो रहा था। वह अग्निष्टोम याग हो रहा था और उस याग में जब हम सम्मिलित हुए तो उन्होंने आदर की दृष्टि से दृष्टिपात किया। नाना वैज्ञानिक अपने यन्त्रों को लिए हुए विराजमान हैं और याग हो रहा है। यजमान से कहा कि यह तुम क्या कर रहे हो? तब यजमान ने यह कहा, मैं क्या नहीं कर रहा हूँ? उत्तर तो विशुद्ध था। परन्तु हमने पुनः यह प्रश्न किया कि प्रभु! यह तुम किस प्रतिक्रिया में लगे हुए हो? उन्होंने कहा, मैं याग में लगा हुआ हूँ, मेरे पुरोहित ने कहा कि तुम याग करो। हम याग में परणित हो गए हैं, याग में रत्त हो गए हैं। उन्होंने कहा, यह याग क्या है? उन्होंने कहा, संसार की प्रतिक्रिया का नाम याग है। हम

पश्चिम दिशा में विद्यमान हैं। याग के पश्चिम भाग में विद्यमान हो करके हम आहुति दे रहे हैं अथवा हुत कर रहे हैं। जब हम हुत कर रहे हैं तो हम ब्रह्म के समीप और ब्रह्म की धाराओं में रत्त रहने के लिए तत्पर हैं। यजमान ने कहा, हम सबसे प्रथम अग्न्याधान करते हैं। अग्न्याधान क्यों करते हैं क्योंकि अग्नि प्रकाश है। अग्नि विभाजन करने वाला है, अग्नि अपने में ऊष्ण है, अग्नि अपने में प्रकाश का द्योतक है। यही तो प्रकाश है जिस प्रकाश से मानव अपनी मोक्ष की पगडण्डी को, साधारण पगडण्डियों को प्राप्त करता रहता है। यही तो धाराएँ हैं जिनको हम साध्य करते हुए अपने जीवन को विचित्र रूपों में परणित कर देते हैं।

याग की प्रतिक्रियाएँ

उस समय हनुमान ने कहा गणेश जी से कि महाराज! जब हम यजमान के समीप पहुँचे तो उन्होंने याग की प्रतिक्रियाएँ हमें प्रारम्भ कीं। हम अग्न्याधान कर रहे हैं, अग्नि से अपने को प्रकाशित कर रहे हैं। अग्नि को देवताओं का दूत बना करके उसके मुखारबिन्दु में हम साकल्य प्रदान कर रहे हैं। अग्नि उसी साकल्य को परमाणु के रूप में परिवर्तित कर देती है अथवा सूक्ष्म बना देती है। वह देवताओं का आहार बन गया हैं वह देवताओं का मुख बन करके उस मुखारबिन्दु में यजमान आहुति दे रहा है। यजमान कहता है मैं अग्नि के मुख में आहुति दे रहा हूँ जिससे वह विभाजन करके हम देवताओं की पुरी में परणित हो जाएँ। याग में परणित हो जाएँ। देवताओं के समीप हमारी हवि जा सके। यजमान कहता है कि मैं जब श्रद्धामयी अग्नि को जागरूक करके घृत की आहुति देता हूँ, मैं श्रद्धा में परणित हो जाता हूँ। उसके पश्चात् मैं जब श्रद्धामयी हुत करके, जल के समीप पहुँच करके अग्नि में आह्वान करता हूँ, हे अग्नि! जब तू प्रातःकाल की अग्नि जागरूक होती है तो तू नाना प्रकार के रूपों में रत्त होती है। हे अग्नि!

मेरी यज्ञशाला में आ और तू विराजमान हो जा। जल के सहित मैं उस अग्नि का स्वागत करता हूँ। जल के सहित मैं समुद्र की कल्पना करता हूँ। बाहरीय विज्ञान में जब प्रवेश हुए, यह जो समुद्र है यह पृथ्वी की परोक्ष में प्रतिक्रिया कहलाती है। वाह रे मेरे प्रभु! तू कितना विज्ञानमयी कहलाता है? तू जहाँ यज्ञोमयी है वहाँ तू विज्ञानमयी है। **यजमान कहता है कि जल की पवित्र धारा को मैं जब दक्षिणाय से उत्तरायण को गति करता हूँ उसके पश्चात् मैं पश्चिमाय गति करने लगता हूँ तो मैं सरस्वती की प्रार्थना करता हुआ मैं पात्र को ले करके जल का सिञ्चन कर रहा हूँ** जैसे परमपिता परमात्मा ने जब इस ब्रह्माण्ड का निर्माण किया, पृथ्वी का सृजन किया यह पृथ्वी रसीतल बन गयी। पृथ्वी के अन्तर्गत जल की धाराओं को प्रभु ने नियुक्त किया। वह समुद्रों के रूप में परणित हो रही है। वही तो एक-दूसरे में सम्मिलित होते हुए अन्नाद को जन्म देती है। वही प्राण सत्ता, ऊर्जा के देने वाले हैं। वही ध्रुवा में गति करके, विष्णु बन करके पालन कर रहे हैं। वह पालना हो रही है।

महाराजा हनुमान ने गणेश जी से कहा, हे प्रभु! मैं यजमान के समीप और पहुँचा तो तीन गुणों से अपने गुणत्व को धारण करने लगे। तीन समिधा ले करके यजमान कहता है 'सम्भूति ब्रह्मवाचः' जैसे ब्रह्मचारी आचार्य के कुल में प्रवेश करता है तो वह तीन समिधा ले करके जाता है। **समिधा का अभिप्राय यह है** तू आत्मा को चेताने वाला बन। समिधा से आत्मा नहीं चेती जाती। आत्मा उस काल में चेती जाती है जब तक तीनों गुणों को अच्छी प्रकार न जान लें तो हम आत्मा को चेता नहीं सकते। वेद के आचार्यों ने कहा, हनुमान जी कहते हैं कि प्रभु! यजमान कहता है कि मैं तीन समिधा अग्नि में प्रविष्ट कर रहा हूँ। वह तीन समिधा क्या हैं? ज्ञान, कर्म, उपासना इन तीनों को मैं ज्ञान रूपी अग्नि में परणित करना चाहता हूँ जिससे ज्ञान रूपी अग्नि मेरे समीप आ जाए और वह ज्ञान रूपी अग्नि को अपना करके मैं अपने

अन्तर्हृदय में आत्मिक याग करने वाला बनूँ। विचार आता रहता है कि जब यजमान ने तीन समिधा और जल की प्रतिक्रियाएँ कीं, उन्होंने समुद्र की कल्पना की है अग्नि को अपना ष्टोम माना है। तो विचार आया कि वह प्राण के समीप विद्यमान हो करके अपनी विचित्र आभाओं में क्रियाओं को रत्त करने लगता है। वेद उद्घोष प्रारम्भ होता है। अग्निमय ज्योति को अपने में धारण करता है और वह कहता है मैं प्राण सखा को अपने समीप लाना चाहता हूँ। प्राणों का आदान-प्रदान करने लगता है। प्राणों का एक-दूसरे में मिलान करना प्रारम्भ करता है। यह चर्चा तो बेटा! मैं कल प्रकट करूँगा। आज केवल मैं इतना तुम्हें उच्चारण किए देता हूँ, हनुमान जी कहते हैं यजमान के समीप मैं इस प्रतिक्रिया में पहुँचा। यजमान कहता है अपनी देवी से, हे देवी! हमें द्यौ लोक में जाना है। उसके लिए क्रियात्मक अपने जीवन को बनाना चाहते हैं विज्ञान में।

यह जल भी विज्ञान है। जैसे वैज्ञानिक रूपों में पहुँचना है। **जब यजमान अग्नि का दक्षिणायण से उत्तरायण को परोक्षण करता है** तो विद्युत की जो धाराएँ हैं वह दक्षिणायण से उत्तरायण को गति करती हैं। हिमालय से उनका मिलन होता है और जब हिमालय से मिलन होता है तो वह जो तरङ्गें हैं, इन्द्र की जो तरङ्गें हैं वह तरङ्गें मेघ के रूप में परणित हो जाती हैं और परणित हो करके क्योंकि अग्नि उसे तपाती है और तपाते ही मेघों का रूप बन जाता है। 'अन्नम् ब्रह्मे वृताम देवः' **वह अन्न का भण्डार पश्चिम दिशा मानी गई है।** जब वही जल पश्चिम दिशा से मिलान करता हुआ वह उत्तरायण के क्षेत्र में वृष्टि का मूलक बनता है तो पृथ्वी के गर्भ में जल का परोक्षण होता है और वह नाना प्रकार के अन्नाद को जन्म दे देती है। यही तो नाना प्रकार के अन्नाद को जन्म दे करके मेरी ममतामयी देवी बनती है।

मेरे प्यारे! ''यज्ञम् ब्रह्मः'' यह विज्ञान का स्वरूप माना गया है। विज्ञान का कितना इससे तारतम्य लगा हुआ है। अग्नि को उद्बुद्ध

करते हैं। जब हम आत्मा को चेताने के लिए हम समिधा के द्वारा परणित होते हैं तो मुनिवरो! यह आन्तरिक जगत् और बाहरीय जगत् में तीनों प्रकार के गुणों से उपराम नहीं होते जैसे यज्ञशाला में तीनों समिधा भस्म नहीं हो जातीं ज्ञान रूपी अग्नि में तब तक यज्ञ भी सार्थक नहीं होता और विज्ञान के आङ्गन में योग भी योगी का सार्थक नहीं होता तीनों गुणों को ज्ञान रूपी अग्नि में समेट लिया जाता है। उसकी धारा में रत्त कर देते हैं। रत्त करके ही उसकी एक विचित्र धारा बन जाती है। यह तीनों गुणों का आदान-प्रदान ज्ञान रूपी अग्नि में इनको सिमटा जाता है। जब वह सिमट जाते हैं तो अग्नि में ही एक धारा उत्पन्न हो जाती है। ज्ञान रूपी अग्नि जब मानव के समीप प्रदीप्त हो जाती है तो वह अपने विचारों का साकल्य बना करके हुत करने लगता है। यह आध्यात्मिकवाद बन गया। आध्यात्मिकवादी भौतिक विज्ञान के सर्वत्र विज्ञान को सिमट करके आध्यात्मिकवाद में प्रवेश कर देता है।

बेटा! प्रभु ने इस संसार की रचना की है और यह पृथ्वी की रचना की। पृथ्वी के अन्तर्गत परोक्ष में समुद्र विद्यमान है। यदि समुद्र न हों तो यह पृथ्वी विष उगलती रहती है। प्राणीमात्र अपने में विष उगलता रहता है। यह जल उसको अपने में शोषण करता रहता है और यदि यह समुद्र, जलाशय न हों तो मानव के लिए एक श्वास भी लेना अवृत बन जाता है प्रभु की अनुपम यह रचना है। आज मैं उस रचना पर न जाता हुआ केवल तुम्हें यह उच्चारण कर रहा हूँ कि हनुमान ने कहा प्रभु! विज्ञान के आङ्गन में याग का अपना विचित्र महत्व माना गया है। हनुमान जी ने कहा, यह तो मैंने यजमान की चर्चाएँ की हैं परन्तु जब मैं विज्ञान के आङ्गन में अपने पूज्यपाद गुरुदेव के द्वारा अध्ययन करता, वह प्रातःकालीन याग कर रहे थे। जब मेरा बाल्यकाल था, मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से बोला कि प्रभु! यह तुम घृतम् अग्नि में समर्पण कर रहे हो यह मेरे विचार में नहीं आ रहा है कि भगवन्! इस प्रकार आप जो याग कर रहे हैं, अग्नि में घृत प्रदान कर रहे हैं।

पूज्यपाद गुरुदेव ने कहा, हे ब्रह्मचारी! यही तो विज्ञान है, यही तो मानव की धारा है जिसका तुम खण्डन करना चाहते हो। उसका मण्डन करो। किस रूप में करो? **श्रद्धामयी जो वृत (घृत) है यह वायुमण्डल में चित्रों को ले जाता है। वह तरङ्गों को ले जाता है और तरङ्गों में तरङ्गित हो करके मानव के जीवन को महान् बना देता है** पूज्यपाद गुरुदेव ने ऐसा कहा और मैंने उस वाक्य को स्वीकार कर लिया। परन्तु जब विज्ञान के क्षेत्र में आया और जब नाना प्रकार के यन्त्रों का निर्माण करने लगा, एक समय मैंने आग्नेय अस्त्र का निर्माण किया तो जहाँ वह यन्त्र ठोस रूप में बन गया था। गुरुत्व रूप में उसका निर्माण हो गया, उसमें से अशुद्ध तरङ्गों का निकास होने लगा। जब अशुद्ध तरङ्गों का निकास होने लगा तो मैंने ऋषि-मुनियों के मध्य में विद्यमान हो करके यह कहा कि प्रभु! यह मैंने जो आग्नेय अस्त्र का निर्माण किया है जिसमें से कुछ विष की धाराओं का जन्म हो रहा है। उन्होंने कहा तुम याग करो मैंने अग्न्याधान किया और वेद मन्त्रों को उद्घोषित किया और साकल्य की आहुति दी तो वह मैंने यन्त्रों के द्वारा दृष्टिपात किया याग की जो तरङ्गें थीं, धारा थीं वह विष की तरङ्गों को अपने में निगल रही थीं। जब निगलती मैंने दृष्टिपात की जिससे मुझे यह सिद्ध हुआ कि वैज्ञानिक यह चाहता है कि दूषित वायुमण्डल बन जाता है विज्ञान से। परन्तु वह याग में जब परणित हो जाता है और वह उनकी अशुद्ध धाराओं को निगल करके, शुद्ध और पवित्र धाराओं का उन्मूलन हो जाता है। वह वायुमण्डल में ओत-प्रोत हो जाती हैं।

एक ही सूत्र के दो मनके

वेद का आचार्य कहता है महाराज अश्वपति के राष्ट्र में वैज्ञानिको ने कहा प्रभु! उस समुद्र के तट पर हमने यह निर्णय किया है कि याग ही विज्ञान है और विज्ञान ही याग है। इस विज्ञान में एक महानता है। महाराजा अश्वपति ने जब यह श्रवण किया तो नत-मस्तक हो करके

राजा ने कहा, **हे वैज्ञानिको! तुम राष्ट्र के प्राण हो।** क्योंकि यह जो विज्ञान है, वह राष्ट्र का प्राण है। **जो वैज्ञानिक आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता होते हैं वह राष्ट्र का मस्तिष्क कहलाता है।** मुनिवरो! राष्ट्र का मस्तिष्क और राष्ट्र का प्राण दोनों का परस्पर समन्वय होता हैं राजा ने कहा हे वैज्ञानिको! इस याग का विज्ञान में अपना-अपना महत्व माना गया है। उन्होंने जब पुनः यह प्रश्न किया तो उन्होंने कहा प्रभु! यह जो विज्ञान है यह परमपिता परमात्मा की एक अनुपम धारा है यह जो अनुपम धारा है इसका समन्वय श्रद्धा से माना गया है और जब श्रद्धामयी का जन्म होता है क्योंकि परमपिता परमात्मा जहाँ यज्ञमयी स्वरूप है, यज्ञशाला का निर्माण करने वाले हैं वहाँ वह विज्ञानमयी स्वरूप भी हैं और वह यागमयी स्वरूप भी हैं। दोनों का मिलान हो करके चेतना में एक सूत्र में दोनों पिरोये जाते हैं। वह दोनों एक ही मनके के सूत्र में है और वह सूत्र क्या है? वह चेतनामयी सूत्र है और वह चेतना में कटिबद्ध है जड़ रूप में है। चेतना के आङ्गन में गति कर रहा है।

मेरे प्यारे! जब राजा को यह निर्णय कराया तो राजा आश्चर्यचकित हो गए। उन्होंने कहा यह मैं कैसे स्वीकार करूँ कि दोनों एक ही सूत्र के मनके हैं और वह मनके जड़ और चेतना के रूप में हैं। उन्होंने कहा, हाँ भगवन्! उन्होंने कहा, वह कैसे? एक मनस्तत्त्व के रूप में है और एक प्राणस्तत्व के रूप में है। **प्राणस्तत्व का जो रूप है वह चेतना से समन्वय है और मन का जो स्वरूप है वह जड़ के आङ्गन में गति करता है यह प्राण की सहायता से कटिबद्ध हो रहा है।** इसी प्रकार जितना भी यह भौतिक विज्ञान है, प्रकृतिवाद है चाहे वह किसी रूप में क्यों न हो परन्तु वह एक जड़वत् के रूप में निहित रहता है। इसी की सहायता से प्रकृति अपने में गति करती है। प्राण में क्या है? वह चेतना है। वह प्राणस्तत्व माना गया है जहाँ प्राण का समन्वय मन के साथ हुआ तो साधक साधनावादी बन जाता है। जहाँ विज्ञान से इसका समन्वय हुआ तो वहाँ मन प्राण में कटिबद्ध हो करके एक-एक

परमाणु अपने में गतिशील होना प्रारम्भ हो जाता है और वह अपने में जब गतिशील होना प्रारम्भ हो जाता है तो वह जगत् अपनी-अपनी धारा में गतिशील बन करके नृत्य करने लगता है। कोई भी बुद्धिमान आ करके किसी भी प्रकार की उड़ान उड़ने लगता है वही उसको प्राप्त हो जाता है। उसी में वह अपनी धाराओं को अपने में धारण करने लगता हैं इस प्रकार जब ऋषियों ने, वैज्ञानिकों ने, राजा को यह निर्णय कराया कि मनस्तत्त्व, प्राणस्तत्व दोनों का यह जगत् है। वैज्ञानिक मन के आङ्गन में प्रवेश करता है, चेतना को कटिबद्ध कर लेता है, उसमें सम्मिलित कर लेता है तो यह नाना प्रकार के यानों का निर्माण करने लगता है। यन्त्रवादी बन जाता है। एक धारा में रत्त होता हुआ अपनी विचित्र धारा अस्वत में तत्पर हो जाता है। महाराजा अश्वपति के यहाँ राजा और वैज्ञानिक दोनों अपने में चर्चाएँ करते रहते थे और वैज्ञानिक इन वाक्यों को कह कर शान्त हो गए। जब शान्त हो गए तो राजा अश्वपति ने यह कहा कि हे वैज्ञानिको! यह मेरे विचार में यथार्थ रूपों में परणित हुआ है।

भौतिक विज्ञान से आध्यात्मिकवाद का समन्वय

आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता भी उसी यज्ञशाला में विद्यमान थे। आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता से बोले, हे आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ताओं! भौतिक विज्ञान से तुम्हारे आध्यात्मिकवाद का क्या समन्वय रहता है? उन्होंने कहा प्रभु! वास्तव में जानना चाहते हो? उन्होंने कहा, हाँ। उन्होंने कहा पाँचों इन्द्रियों को मेरे समीप लाओ राजन्! उस ऋषि ने कहा कि हे भगवन् आप मुझे अपनी पाँचों इन्द्रियों को प्रदान कर दीजिए। राजा ने उनके विषय को बखान करते हुए ऋषि को प्रदान कर दिया। ऋषि उनको ले करके बोले कि यह जो विज्ञान है, जैसे नेत्रों का विज्ञान है वह केवल सूर्य तक सीमित रहता है। चन्द्र का जो विज्ञान है वह रसों तक सीमित रहता है जो श्रोत्रों की धाराएँ हैं वह दिशाओं तक सीमित

रहती हैं। जो तुम्हारी त्वचा है वायु से उसका समन्वय होता है। उन्होंने कहा यह जो घ्राण है सुगन्ध से, पृथ्वी से इसका समन्वय होता है। तो प्रत्येक इन्द्रियों के विषय को साकल्य बना करके जब हम हृदय रूपी यज्ञशाला में, हृदय रूपी गुफा में विद्यमान हो करके जब हम याग करते हैं, **आध्यात्मिक याग** करते हैं तो वह ऐसा विज्ञान बन जताा है यह विज्ञान नहीं सम्भूति कहलाता है। ऐसा प्रतीत होता जहाँ से यह अणु-परमाणु त्रिषेणु जहाँ वैज्ञानिकों का समापन होता है वहाँ आत्म-विज्ञान की उपलब्धियाँ प्रारम्भ हो जाती हैं। वहाँ से आध्यात्मिकवाद की उपलब्धियाँ हो जाती है और वह आध्यात्मिक याग बन जाता है क्योंकि जैसे भौतिक यजमान अपनी यज्ञशाला में नाना प्रकार के पदार्थों को ले करके पौष्टिक और प्राणवर्द्धक और रुग्ण नाशक इन तीनों प्रकार की औषधियों को ले करके अग्न्याधान कर देता है। वह अग्नि उनका विभाजन कर देती है। इसी प्रकार ज्ञान, कर्म, उपासना को ले करके, रजोगुण, तमोगुण, सतोगुण को ले करके, जो इन्द्रियों में समाहित हो रहा है, कोई रूप के आङ्गन में, कोई रसों के आङ्गन में कोई पृथ्वी के सुगन्ध के आङ्गन में, इन सबका साकल्य बना करके हृदय रूपी यज्ञशाला में जो अग्नि प्रदीप्त हो रही है, ज्ञान रूपी अग्नि का उद्बुद्ध हो गया है, आत्म-प्रकाश की अग्नि प्रकाश देने लगी है, जब यजमान इनको हुत कर देता है तो वह आध्यात्मिक याग बन जाता है और आध्यात्मिक याग उस काल में बनता है जब भौतिक विज्ञान का समापन हो जाता है और आध्यात्मिकवाद की उपलब्धियाँ हो जाती हैं।

मेरे प्यारे! यह विज्ञानवेत्ता प्रभु के राष्ट्र में चला जाता है। वह दोनों प्रकार के यागों को समेट करके मोक्ष की पगडण्डी को ग्रहण कर लेता हैं वाह रे मेरे प्रभु! तेरा विज्ञान कितना नितान्त है? कितना महान् ? महाराजा अवश्पति ने जब यह प्रसङ्ग लिया तो मौन हो गए। आज का वाक्य हमारा क्या कह रहा है कि **हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, इन दोनों प्रकार के विज्ञान का समोवश करके**

अपने में शान्ति की स्थापना करने वाले बनें। यह है बेटा! आज का वाक्य। आज का विचार क्या कह रहा है कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हुए इस संसार-सागर से पार हो जाएँ।

आज के वाक्य उच्चारण करने का अभिप्राय यह कि परमात्मा का यह अनूठा जगत् है, यह अनुपम है। हम इसकी अनुपमता को जानने का प्रयास करें। यह है बेटा! आज का वाक्य। आज का वाक्य समाप्त, अब वेदों का पठन-पाठन होगा।

महर्षि महानन्द जी–अच्छा भगवन्!
पूज्यपाद गुरुदेव–आनन्द रहो!

दिनाँक : 19 सितम्बर, 1985
समय : रात्रि 8 बजे
स्थान : ई-31 लाजपत नगर-3
नई-दिल्ली

सदस्यता

पूज्यपाद ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज की ज्ञान गङ्गा का मासिक पत्रिका ''यौगिक प्रवचन'' में, वैदिक अनुसन्धान समिति द्वारा प्रकाशन किया जाता है और जिस के आजीवन सदस्य बनने के लिए शुल्क 800 रु. और वार्षिक सदस्य बनने के लिए शुल्क 100 रु. है जिसको आप समिति के पते के साथ-साथ निम्न किसी एक पते पर भी डाक द्वारा भेजकर सदस्य बन सकते हैं–

1. डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश, प्रकाशन मन्त्री
   ए-59, पँचशील एन्क्लेव, नई दिल्ली-110017, फोन : 011-41030481
2. सुश्री नीरू अबरोल, कोषाध्यक्ष
   K-3, लाजपत नगर,-III, नई दिल्ली-110024 फोन : 011-41721294
3. श्री जितेन्द्र चौधरी, प्रचार मन्त्री
   ए-84, मालवीय नगर, नई दिल्ली-110017, मोबाइल : 9811707343

।। ओ३म् ।।

शब्द विज्ञान

मैं उच्चारण कर रहा था। यह दीपमालिका का वर्णन हमारे वैदिक साहित्य में, वायु को वाहन बना करके एक दीपमालिका का वर्णन आता रहता है। वाहन के रूप में गान गाने वाले की कोई सीमा नहीं होती। एक गान गा रहा है माता प्रसन्न हो रही है, बाल्य गान गा रहा है माता प्रसन्न हो रही है। एक गान ब्रह्मवेत्ता ब्रह्म का गान गा रहा है समाज प्रसन्न हो रहा है। एक गान गाता हुआ अन्तर्हृदय में उनका हृदय स्वतः प्रसन्न हो रहा है। तो गान गाने वाले कुछ योगेश्वर इस प्रकार के भी हुए हैं जिन्होंने शब्द विज्ञान के ऊपर बहुत अनुसन्धान किया है। जिन्होंने गान के ऊपर बहुत अनुसन्धान किया है। यह जो गायत्री है जो माँ के रूप में गाई जाती है, क्योंकि गान कौन गाता है, गायत्री क्या है? जो मुनिवरो! देखो गाई जाती हो। **प्रत्येक वेद के मन्त्र को गायत्री कहते हैं।** कौन गाता है, गायत्री क्या है? जो मुनिवरो! देखो गाई जाती हो, प्रत्येक वेद के मन्त्र को गायत्री कहते हैं। हमारे यहाँ गायत्री नामोकरण एकोकी का ही नहीं कहलाता। यह गायत्री इसलिए विशेष मानी जाती है कि इसमें 24 अक्षर माने गए हैं, इसलिए मानव का शरीर भी 24 खम्बों वाला है, यह ब्रह्माण्ड भी 24 खम्बों वाला है। 10 प्राण हैं, 10 इन्द्रियाँ हैं और मुनिवरो! मन, बुद्धि, चित्त और अहँकार कहलाता है। यह 24 खम्बों वाला यह बह्माण्ड हमें दृष्टिपात आ रहा है। यही मानव के शरीर में है, यह 24 खम्बों वाला ब्रह्मा मानवीय शरीर कहलाता है। जिसके ऊपर यह आधारित रहता है, प्राणेश्वर अपनी आभा में गति करता रहता है। तो परिणाम क्या? जब वह गान गाता है, गान गाने वाला गाता ही रहता है सदैव ही गाता है। जब माता मल्हार गान गाती है, तो मेघों से वृष्टि प्रारम्भ

हो जाती है। जब मानव पाडित्व गान गाता है, तो उसकी पाँडित्य की धारा अन्तरिक्ष में ओत-प्रोत हो जाती है। यजमान जब यज्ञशाला में स्वाहा कह करके हृदय से गान गाता है तो मुनिवरो! देखो यज्ञशाला की तरङ्गों के साथ में उनके जो स्वाहा शब्द हैं वह अन्तरिक्ष में ओत-प्रोत हो जाते हैं।

मेरे प्यारे! देखो मुझे स्मरण आता रहता है इसके ऊपर नाना वैज्ञानिक हुए हैं जिन वैज्ञानिकों ने बहुत अनुसन्धान किया है। यह विज्ञान महाराजा महर्षि भारद्वाज मुनि की यज्ञशाला में भी विद्यमान था। यही विज्ञान मेरे पुत्रो देखो उद्दालक गोत्र के कुछ गान केतु ऋषि के आश्रम में भी यह विज्ञान पनपता रहा है। मैं इस विज्ञान के ऊपर कोई विशेष विवेचना देना नहीं चाहता हूँ। परन्तु विचार यह है कि ऐसे-ऐसे यन्त्रों का निर्माण भी हुआ है जैसे शब्द है, शब्द के साथ में उसका चित्र यन्त्रावलियों में दृष्टिपात आता रहा है। यज्ञोमयी ब्रह्मा वाचाः इस शब्द को लेकर के रचना की गयी है। तो विचार क्या? मेरे पुत्रो देखो वेद कहता है कि यह शब्द विज्ञान है, सात्विकता में रमण करने वाला जो सत्यता में रहने वाला है, उसके ऊपर मानव को सदैव चिन्तन और मनन करना चाहिए। हृदय से इसके ऊपर विचारशील बन करके अपनी आभा में आभाहित रहना चाहिए जिससे मानव का जीवन पवित्रता में रमण करता हुआ, हम वैदिक विज्ञान को वैदिक-गान को अपने साकार रूप में ला करके दर्शाते रहें, विचार विनिमय करते रहें।

पूज्यपाद-गुरुदेव

॥ ओ३म् ॥

ऋषियों के उद्‌गार

1. संसार में ज्ञान का नाम प्रकाश है।
2. जिस प्रकार का बनना है उसी प्रकार का ज्ञान हमें होना चाहिए।
3. हमारे ऋषि-मुनियों ने सबसे प्रथम अध्ययन को ऊँचा माना है।
4. हम परमात्मा को साक्षात्कार करना चाहते हैं तो मन और प्राण दोनों का अध्ययन करना होगा।
5. मन और प्राण दोनों के चिन्तन का नाम ही प्रभु को जानना है।
6. अध्ययन का नाम ही योग कहा गया है।
7. गम्भीर अध्ययन से हमारे में विवेक उत्पन्न होगा।
8. जो मानव प्रभु के राष्ट्र में, प्रभु के इस रचाए हुए जगत में आत्मा का चिन्तन नहीं करता, आत्मवेत्ता नहीं बनता।
9. प्रातःकाल की अमृतमयी वेला में जागरूक होने के पश्चात् प्रभु का चिन्तन करना, उसकी महिमा को विचारना मानव का एक महान् कर्त्तव्य हो जाता है।
10. संसार में जो भी कर्म करता है वह मानव स्वयँ अपने ही लिए करता है। अपनेपन में ही उसे प्रसिद्धि प्राप्त होती है।
11. मानव का संसार में एक ही कर्त्तव्य रहता है कि दुर्गुणों को त्यागना और शुभ कर्मों को अपनाना।
12. मानव को यथार्थ वाक् उच्चारण करने का अधिकार होना चाहिए।
13. यथार्थ वाक् उच्चारण करने का अधिकार उस काल में प्राप्त होता है जब उसे स्वयँ अपनी आत्मा का विश्वास हो जाता है।
14. हमारा अन्तरात्मा दुष्ट कामनाओं को धिक्कारता है जिसका अन्तरात्मा धिक्कारता है उस मानव को संसार में जीने का अधिकार प्राप्त नहीं होना चाहिए।

यौगिक प्रवचन के स्वामित्व व अन्य विवरण का ब्यौरा फार्म नं. 4 (नियम नं. 8)

1.	प्रकाशन स्थान	:	दिल्ली
2.	प्रकाशन अवधि	:	मासिक
3.	मुद्रक	:	डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश
	नागरिकता	:	भारतीय
	मुद्रक का पता	:	ए-59, पञ्चशील एन्कलेव, नई दिल्ली-110017
4.	प्रकाशक	:	डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश
	नागरिकता	:	भारतीय
	प्रकाशक का पता	:	ए-59, पञ्चशील एन्कलेव, नई दिल्ली-110017
5.	सम्पादक का नाम	:	डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश
	नागरिकता	:	भारतीय
	सम्पादक का पता	:	ए-59, पञ्चशील एन्कलेव, नई दिल्ली-110017
6.	उन व्यक्तियों के नाम व पते जो समाचार पत्र के स्वामी हों तथा समस्त पूँजी के एक प्रतिशत से अधिक के साझेदार या हिस्सेदार हों।	:	वैदिक अनुसंधान समिति (पञ्जी.)

मैं डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश एतद् द्वारा घोषित करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिए गए विवरण सत्य हैं।

डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश
प्रकाशक के हस्ताक्षर

वैदिक अनुसंधान समिति (पञ्जी.)
सी-38, शिवालिक, मालवीय नगर, नई दिल्ली-110017

।। ओ३म् ।।

श्रद्धा-सुमन

पूज्य माताश्री श्रीमति शान्ति देवी अबरोल

परमपिता परमात्मा की अद्भुत सृष्टि रचना में आत्माओं का आवागमन निरन्तर प्रवाहित रहता है। जिसमें दिव्य आत्माएँ आत्म-लोक में प्रवेश करके उस प्रभु के ज्ञान-विज्ञान को प्रकाशमान बनाए रखने के लिए अपने त्याग व तपस्या से गतिशील बनाने में अपनी आहुति परम्परा से प्रदान करती चली आ रही हैं और उस ज्योति के प्रकाश में अन्य आत्माएँ अपने को इस संसार से उपराम होने के प्रयास में प्रयत्नशील रहती हैं। ऐसी ही एक पुण्य आत्मा इस संसार में मातृशक्ति का प्रदर्शन करने के लिए पूज्य माताश्री श्रीमति शान्ति देवी अबरोल के रूप में अपना जीवन ऋषि परम्पराओं को साकार रूप प्रदान करते हुए हम सबके मध्य से स्थूल शरीर त्याग करके प्रत्यक्ष रूप से दिनाँक 2-12-2017 को अपने लोकों को परमपिता परमात्मा के आनन्द में ओतप्रोत रहने के लिए गमन कर गयी।

पूज्य माताजी प्रणय-सूत्र के पवित्र बन्धन के उपरान्त गृहस्थ जीवन का आदर्श रखते हुए इसके साथ-साथ अपनी शिक्षा का सदुपयोग सेवावृत्ति के माध्यम से अपने परिवार के उत्थान में सहयोग का पूरा दायित्व वहन करने में भी संलग्न रहीं। अपने जीवन में एक सुयोग्य पुत्र श्री अशोक कुमार को इंजीनियरिंग की शिक्षा प्रदान कराके और अपनी सुयोग्य सुपुत्रियों को–सु. कुमारी नीरू अबरोल को सी.ए. की परीक्षा में उत्तीर्ण कराके प्रजा की सेवा में संलग्न करते हुए भी आध्यात्मिक ज्ञान में

ओतप्रोत रहने का मार्ग प्रशस्त किया, अनुज पुत्री रेणू को उत्तम शिक्षा प्राप्त कराके गृहस्थ आश्रम के पवित्र जीवन में प्रवेश कराया। इस प्रकार जन्म से ही वैदिक सम्पदा से सम्पन्न विदुषी माता ने अपनी प्रजा को जीवन में भौतिक, आध्यात्मिक ज्ञान के साथ-साथ गृहस्थ की महत्ता का भी दर्शन कराके वैदिक परम्परा का पालन करते हुए अपने जीवन में सभी आदर्शों की पूजा में संलग्न रहीं और पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त की महाराज के सानिध्य में प्रारम्भ से ही उनके दिल्ली आने के पश्चात् समस्त परिवार उनके वात्सल्य की छत्रछाया में अपनी आत्मोन्नति में तन-मन-धन से संलग्न हो गया। पूज्यपाद गुरुदेव के प्रवचनों एवम् क्रियाकलापों से अपने जीवन को ऊर्ध्वागति में ले जाने का प्रयास करते हुए उनकी सुपुत्री सु. कुमारी नीरू अबरोल ने अपने जीवन को यज्ञमयी बनाने के साथ-साथ अपनी अनुज बहन सहित उसके दोनों सुपुत्रों के परिवारों को भी वैदिक सम्पदा से सम्पन्न बनाने में संलग्न किया हुआ है।

पूज्य माताजी अत्यन्त सरल स्वभाव, उदार, दानी एवम् न्यायप्रिय जीवन के लिए समाज में एक महत्त्वपूर्ण स्थान रखती हैं और उन्हीं आदर्शों को अपने समस्त परिवार को अर्पित करते हुए इच्छानुसार इस संसार के बन्धन से मुक्ति की परमपिता परमात्मा से प्रार्थना करते हुए पञ्चतत्वों में विलीन हो गयीं।

विदुषी पूज्या माताश्री को भावपूर्ण श्रद्धा एवम् आत्म विभोर होकर उनकी ज्येष्ठ सुपुत्री ने श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हुए पूज्यपाद गुरुदेव के कर-कमलों में 2100 रुपये का सात्विक अनुदान श्रद्धा-सुमन के रूप में पत्रिका के प्रकाशन के लिए अर्पित किया है।

समिति उपरोक्त अनुदान के लिए अबरोल परिवार का हृदय से आभार प्रकट करती है और माताश्री के चरणों में श्रद्धा-सुमन अर्पित करते हुए समस्त परिवार की सुख, शान्ति, दीर्घायु एवम् सर्वतोन्मुखी समृद्धि के लिए परमापिता परमात्मा से प्रार्थना करती है।

वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.)

।। ओ३म् ।।

जन्मदिवस की शुभकामनाएँ

आयुष्मति यजुन्षी

परमपिता परमात्मा की असीम कृपा से एवम् पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज के शुभाशिर्वाद से श्रीमति कमलेश त्यागी निवासी मुजफ्फरनगर उत्तर प्रदेश ने अपनी सुपौत्री आयुष्मति यजुन्षी सुपुत्री श्रीमति प्रेरणा त्यागी व रचित त्यागी के जन्मदिवस की पावन वेला के शुभागमन पर 1100 रु. का सात्विक अनुदान पत्रिका के प्रकाशन के लिए अत्यन्त उदारता से अर्पित किया है। जिसके लिए समिति हृदय से आभार प्रकट करती है।

श्रीमति कमलेश त्यागी बाल्यकाल से ही वैदिक सम्पदा के संस्कार अपने माता-पिता के गृह से ग्रहण करती चली आ रही हैं और गृहस्थ में प्रवेश करने के पश्चात् भी उसी परम्परा को जीवन में अपनाते हुए अपने जीवन को बहुत ही साधारण व सात्विक भाव से अपने सुपुत्र श्री रचित त्यागी के परिवार के साथ आनन्द से व्यतीत करते हुए अपने परिवार को भी उसी ज्ञान से ओतप्रोत करने में संलग्न रहती हैं। उन्हीं परम्पराओं का सम्मान करते हुए अपने सुपुत्र को भी उसी राह में आचरण की राह दिखाते हुए ऋषि-मुनियों के शुभाशिर्वाद के लिए इस वैदिक ज्ञान की गङ्गा को गति प्रदान करने के लिए अपना संकल्प अर्पित किया है। जीवन की विषम परिस्थितियों में भी अपने जीवन को बड़ी निष्ठा और श्रद्धा से आगे बढ़ाते हुए उसी ज्ञान को अपनी सुपौत्रियों को भी शिक्षित करने में अपने तन-मन-धन से प्रयत्नशील हैं।

समिति आयुष्मती यजुन्षी के जन्मदिवस की बारम्बार शुभकामना प्रकट करते हुए समस्त परिवार के लिए सुख-शान्ति, दीर्घायु एवम् सर्वतोन्मुखी समृद्धि के लिए परमापिता परमात्मा से प्रार्थना करती है।

वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.)

योगनिष्ठ पूज्यपाद ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज (शृङ्गी ऋषि जी) की अमृतवाणी संहिता के रूप में

*1.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 1)	80.00
*2.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 2)	80.00
3.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 3)	60.00
*4.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 4)	100.00
5.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 5)	60.00
6.	Yogic Wisdom of Ancient Rishis	80.00
7.	वेद पारायण-यज्ञ का विधि विधान	25.00
8.	आत्म-लोक	35.00
9.	धर्म का मर्म	40.00
10.	शंका-निवारण	35.00
11.	यज्ञ-प्रसाद अर्थात् यज्ञ का महत्व	40.00
12.	आत्मा व योग-साधना	35.00
*13.	देवपूजा	50.00
14.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 1)	125.00
15.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 2)	125.00
16.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 3)	125.00
17.	रामायण के रहस्य	35.00
18.	यज्ञ एवं औषधि विज्ञान	45.00
19.	महाभारत के रहस्य	30.00
20.	अलङ्कार-व्याख्या	35.00
21.	रावण-इतिहास	50.00
22.	महाराजा-रघु का याग	30.00
23.	वनस्पति से दीर्घ-आयु	35.00
24.	मोक्ष प्राप्ति का मार्ग	35.00
25.	चित्त की व वृत्तियों का निरोध	35.00
26.	आत्मा, प्राण और योग	35.00
27.	पञ्च-महायज्ञ	35.00
28.	अश्वमेघ-याग और चन्द्रसूक्त	40.00
29.	याग-मन्जूषा	40.00
30.	आत्म-दर्शन	30.00
31.	पुत्रेष्टि-याग और मात-दर्शन	30.00
32.	याग और तपस्या	60.00
33.	यागमयी-साधना	35.00
34.	यागमयी-सृष्टि	35.00
35.	याग-चयन	40.00
36.	दिव्य-रामकथा	120.00
37.	ज्ञान-कर्म-उपासना	35.00
38.	दिव्य-ज्ञान	40.00
*39.	महाभारत एक दिव्य दृष्टि	90.00
40.	महर्षि-विश्वामित्र का धनुर्याग	40.00
41.	आत्म-उत्थान	40.00
42.	तप का महत्व	40.00
43.	अध्यात्मवाद	40.00
44.	ब्रह्मविज्ञान	40.00
45.	वैदिक-प्रभा	35.00
46.	प्रकाश की ओर	35.00
47.	कर्तव्य में राष्ट्र	40.00
48.	वैदिक-विज्ञान	35.00
49.	धर्म से जीवन	35.00
50.	आत्मा का भोजन	40.00
51.	साधना	35.00
52.	त्रेताकालीन-विज्ञान	40.00
53.	यज्ञोमयी-विष्णु	40.00
54.	यौगिक प्रवचन माला भाग-6	80.00
55.	स्वर्ग का मार्ग	50.00
*56.	यौगिक प्रवचन माला भाग-7	80.00
57.	माता मदालसा	60.00
58.	यौगिक प्रवचन माला भाग-8	80.00
59.	यौगिक प्रवचन माला भाग-9	80.00
60.	यौगिक प्रवचन माला भाग-10	80.00
61.	याग एक सर्वाङ्ग पूजा	80.00
62.	यौगिक प्रवचन माला भाग-11	80.00
*63.	यौगिक प्रवचन माला भाग-12	80.00
64.	मानव कल्याण की चर्चाएँ	50.00
65.	प्रभु-दर्शन	50.00
*66.	यौगिक प्रवचन माला भाग-13	80.00
*67.	समाज उत्थान का मार्ग	50.00
*68.	यौगिक प्रवचन माला भाग-14	80.00
*69.	ब्रह्म की ओर	50.00
*70.	ईश्वर मिलन	50.00
*71.	यौगिक प्रवचन माला भाग-15	80.00
*72.	यौगिक प्रवचन माला भाग-16	80.00
*73.	नैतिक शिक्षा	50.00
*74.	यौगिक प्रवचन माला भाग-17	100.00
*75.	आत्मिक ज्ञान	60.00

*सहजिल्द का मूल्य 20 रु. अतिरिक्त है।

पुस्तक प्राप्ति के स्थान

योगनिष्ठ पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज की अमृतवाणी का साहित्य सँहिता, कैसेट्स, सी. डी. व डी. वी. डी. के रूप में निम्न स्थानों पर उपलब्ध हैः–

1. श्री महानन्द संस्कृत महाविद्यालय, लाक्षागृह, बरनावा, जिला–बागपत, (उ.प्र.)। मोबाइल नं 09719622950
2. श्री गुरुवचन शास्त्री, मकान नं. 165/30ए, दक्षिण भोपा रोड़, निकट माढ़ी की धर्मशाला, नई मण्डी, मुजफ्फरनगर (उ. प्र.)। मोबाइल नं. 09412888050
3. सुश्री. नीरू अबरोल, के-3 लाजपत नगर-3, नई दिल्ली। दूरभाष नं. 011-41721294
4. डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश, A-59 पंचशील एन्क्लेव नई दिल्ली-110017 दूरभाष नं. 011-41030481
5. श्री जितेन्द्र चौधरी, ए-84, मालवीय नगर, नई दिल्ली-110017, मो. नं. 9811707343
6. श्री अनिल त्यागी सी-47 रामप्रस्थ, गाजियाबाद (उ.प्र.)। दूरभाष नं. 0120-4165802
7. श्री आशीष त्यागी, सुपुत्र श्री सुशील त्यागी डी-293, रामप्रस्थ, पोस्ट ऑफिस चन्द्रनगर, गाजियाबाद पिन कोड-201011 (उ.प्र.)। दूरभाष नं. 0120-2642052
8. श्री लोमश त्यागी, 106/4 पंचशील कालोनी गढ़ रोड़, मेरठ, (उ.प्र.) मोबाइल नं. 09410452076
9. श्री विवेक त्यागी, 16ए, आलोक कॉलोनी, अल्कापुरी, हापुड़, (उ.प्र.)। दूरभाष नं. 0122-2316196
10. श्री संजीव त्यागी, 1107, सैक्टर-3, बल्लभगढ़, फरीदाबाद हरियाणा। मोबाइल नं. 09910589486
11. मैं. हर्ष मेडिकोज, ए-2/31, सैक्टर-110–मार्किट नोएडा, फेस-2, (उ.प्र.) मोबाइल नं. 9899228860, 9871367937
12. पवन त्यागी सुपुत्र श्री राजाराम त्यागी, मौ. खड़खड़ियान, माता, ग्राम खरखौदा, जिला मेरठ (उ.प्र.) मोबाइल नं. 7536097171
13. श्रीमती बाला, 251, दिल्ली गेट, नई दिल्ली। दूरभाष नं. 011-23282088
14. डॉ. अशोक कुमार आर्य, आर्यावर्त कालोनी निकट मुरादाबादी गेट, अमरोहा, जिला-जे. पी. नगर (उ.प्र.) मोबाइल नं. 09412139333
15. श्री सुमन कुमार शर्मा, जे-380, सैक्टर बीटा-2, ग्रेटर नोएडा, (उ.प्र.) मोबाइल नं. 09313530505
16. श्री सतीश भारद्वाज, ग्राम बहेडी, रोहाना मिल, जिला मुजफ्फरनगर (उ.प्र.)।
17. मैं. विजय कुमार, गोविन्द राम हासानन्द, 4408, नई सड़क, दिल्ली। दूरभाष नं. 011-23977216

मासिक सहयोग

श्री हरीराम गुप्ता, केसर स्टील, वजीरपुर, दिल्ली	1000 रुपये
श्री चिंतामणि त्यागी एवं श्री जगमोहन त्यागी बरला, मुजफ्फरनगर	1000 रुपये
श्री संजीव त्यागी (दिनकरपुर) फरीदाबाद, हरियाणा	1000 रुपये
श्री अरुण त्यागी, राजनगर, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश	500 रुपये
श्री विनोद त्यागी सुपुत्र श्री जयप्रकाश त्यागी मकनपुर, गाजियाबाद	500 रुपये
मा. कार्तिक त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा	251 रुपये
मा. लोमश त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा	251 रुपये
डॉ. शुचि, डॉ. राजीव चावला, आणद, गुजरात	250 रुपये
श्री राकेश शर्मा, विराट नगर, पानीपत, हरियाणा	250 रुपये
श्री कृष्ण लाल बत्रा, इन्द्री, जिला करनाल	201 रुपये
मास्टर कवन्धि, रामप्रस्थ, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश	101 रुपये
मास्टर सिद्धार्थ, अँकुर अपार्टमैन्ट, दिल्ली	101 रुपये
मास्टर अभ्युदय त्यागी, न्यू जर्सी, अमेरिका	101 रुपये

नम्र-निवेदन

समिति के बैंक के खाते में दान की राशि हस्तान्तरण करने से दानदाताओं का नाम, पता व उद्देश्य इत्यादि की जानकारी बैंक से पास नहीं हो पाती इसलिए सभी दानदाताओं से नम्र-निवेदन है कि राशि बैंक के खाते में हस्तान्तरण करने के साथ समिति की वेबसाइट पर या निम्न किसी भी एक पते पर दान राशि का अन्य विवरण सहित सूचना देने का कष्ट करें–

1. डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश, प्रकाशन मंत्री

   ए-59, पँचशील एन्क्लेव, नई दिल्ली-110017, फोन : 011-41030481

2. सुश्री नीरू अबरोल, कोषाध्यक्ष

   K-3, लाजपत नगर,-III, नई दिल्ली-110024 फोन : 011-41721294

योगमुद्रा में प्रवचन करते हुए पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज

उद्‌बोधन

हमारे यहाँ भिन्न-भिन्न प्रकार के ऋणों की चर्चा आती है। आज मैं उन ऋणों की चर्चा में जाना नहीं चाहता हूँ, केवल अपने प्यारे प्रभु का गुण-गान गाते हम अपना अध्ययन प्रारम्भ कर देते हैं। प्रायः सभी मानवों का यह कर्त्तव्य हो जाता है—**प्रातःकाल की अमृतमयी वेला में जागरुक हो जाने के पश्चात् प्रभु का चिन्तन करना, उसकी महिमा को विचारना मानव का एक महान कर्तव्य हो जाता है।** आज कोई मानव यह कह रहा है कि मैं किसी प्राणी के लिए यह कार्य कर रहा हूँ या चेतना के लिए ईश्वर तत्व के लिए परन्तु यह नहीं माना जाता। **सँसार में जो भी कर्म करता है वह मानव स्वयं अपने ही लिए करता है। अपनेपन में ही उसे प्रसिद्धि प्राप्त होती है।** अपनेपन में ही उसे नाना प्रकार से उसका आत्म हृदय उसको धिक्कारने लगता है परन्तु जिसका अन्तरात्मा धिक्कारता है उस मानव को ही सँसार में जीने का अधिकार प्राप्त नहीं होना चाहिए। क्योंकि जीवन उन प्राणियों को सदैव प्राप्त होना चाहिए जिनको अपनी आत्मा पर, स्वयँ की प्रवृत्तियों पर विश्वास और श्रद्धा नहीं होती उस मानव का अन्तरात्मा उसको धिक्कारता रहता है परन्तु वह सदैव अपने प्रकृति के आवेशों में आ करके अपनी प्रतिभा को ऐसे प्राप्त कर देता है जैसे सायँकाल के सूर्य की किरणें अस्त हो जाती हैं। मानव का सँसार में एक ही कर्तव्य रहता है कि दुर्गुणों को त्यागना और शुभ कर्मों को अपनाना। यह मानव का विचित्र कर्तव्य होता है। जिनके ऊपर मानव को अध्ययन करना है।

पूज्यपाद-गुरुदेव

वर्ष 46 : अंक : 546
मार्च 2018

मूल्यः
दस रुपये

RNI No. 23889/72
Delhi Postal R. No. DL (S)-01/3220/2018-2020
Licence to Post without prepayment
U (SE)-70/2018-2020
POSTED AT N.D.PS.O ON 10/11-03-2018
Published on 5th day of the same month